अनुक्रमणिका

विषय-सूची — पृष्ठ-संख्या

०१. ब्रजधाम का स्वरुप.....०३
०२. वृन्दावन का वास्तविक स्वरूप.....०५
०३. सीमान्त ब्रज के विषय में.....०९
०४. पारस्परिक संकीर्णता से धाम पर आघात..१४
०५. संकीर्तन से ही यात्रा की सफलता.....१७
०६. सर्वोपरि धन 'सेवा-आराधन'.....१९
०७. धामप्रेमी पर कृपामयी की कृपा.....२२
०८. सत्संग से सुदृढ़ धामनिष्ठा.....२५
०९. धामाश्रय से सहज साध्य-संप्राप्ति.....२७
१०. श्रीमद्भागवत-कथा का रसास्वादन कराने वालीं मानमन्दिर की बाल-आराधिकाएँ.....२९
११. Worshipping The *Dhäma*.....३१
१२. श्री राधारानी ब्रजयात्रा-२०१८ (प्रथम दिवस, संकल्प समारोह).....३२

ब्रज में फिर प्रेम भरी प्यारी,
मुरली की तान सुना देना।
बलराम कृष्ण दोनूँ भैया,
मधुर दरस दिखला देना ।।

फिर घर-घर में मंगल होवें, फिर दूध दही नदियाँ बहवें,
फिर प्रेम रूप माखन खाकर, तुम माखन चोर कहा लेना।
वंशी की जादू की तानन, सुन गोपी तोड़ें जग बंधन,
फिर चरनन घुँघरू घोर बजें, यमुना तट रास रचा लेना।
फिर ब्रज की प्यारी बने छटा, नित ही बरसे फिर श्याम घटा,
यह आस हमारी है नटवर, तुम हमको दरस दिखा देना ॥

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,

गह्वरवन , बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

(Website :www.maanmandir.org) (E-mail :ms@maanmandir.org)

mob. : 9927338666, 9837679558

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप बाबाश्री के प्रातःकालीन सत्संग का ८ से ९ बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

(पत्रिका लेखन में यहाँ के संत व साध्वियों का विशेष सहयोग है पर वह त्याग के कारण नाम नहीं देना चाहते हैं)

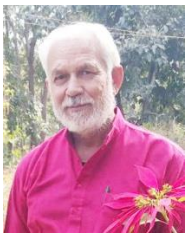

प्रकाशकीय

राधारानी ब्रजयात्रा अपने गौरव से न केवल भारतीयों को अपितु सारे संसार के कृष्णभक्तों के लिए एक महाकुम्भ की भाँति महिमामण्डित है | वर्ष पर्यन्त यात्रा की चर्चा लोगों के मुख का आभूषण बनी रहती है क्योंकि यात्रा का वैशिष्ट्य ही कुछ अलौकिक-सा है | सारी दुनिया के भक्त एक ध्वजा के नीचे किसी वृहद् वाटिका के विविध पुष्पों की भाँति विविधता में एकता का दर्शन कराते हैं | अनेक बोली-भाषाएँ, रहन-सहन, वेष-भूषा, खान-पान उनकी जीवनचर्या में बाधा नहीं बनते | भगवन्नामामृत की सरस रसप्रवाहिनी रसधारा में अवगाहन कर सभी विषमता को भुलाकर एक केन्द्रीभूत पुंज की भाँति आनंद में निमग्न रहते हैं | ब्रज के विरक्त संत श्रीबाबा महाराज किसी जाति, सम्प्रदाय अथवा वर्ग विशेष के नहीं; वे समस्त राष्ट्र की आत्मा के रूप में सबका समान रूप से पोषण करते हैं | यात्रीजनों का अपने सहयात्रियों के प्रति ऐसा सद्भाव दृष्टिगोचर होता है कि सभी एक-दूसरे की भगवद्भाव से सेवा करते हैं | किसी प्राणी को ४० दिन पर्यन्त न अपने परिजनों की याद आती है और न अपने धन-धान्य की | सतत् चलते भगवन्नाम-संकीर्तन से जीव में भगवान् के प्रति ऐसी तन्मयता दिखाई पड़ती है जो अन्य किसी साधन से संभव नहीं है | १९८८ से प्रतिवर्ष चलने वाली बाबाश्री की यह यात्रा विशेषतः गरीबों (भगवदाश्रित निष्किंचन भक्तों) के लिए है क्योंकि यह एक ४० दिवसीय निःशुल्क याज्ञिक कर्म (सतत् संकीर्तन रूपी महायज्ञ) है | सप्ताहों-महीनों पहले यात्री आ जाते हैं और कई दिन तक रुके भी रहते हैं; ऐसा वात्सल्य मिलता है सभी यात्रीजनों को बाबामहाराज का, जिससे वे वंचित नहीं होना चाहते | विचार आया कि क्यों न इस सन्दर्भ में हमारी पत्रिका के पाठकों को भी कुछ बता दिया जाए – प्रिय बन्धुओ ! यह यात्रा २२/१०/२०१८ से ३०/११/२०१८ तक चलेगी, आप सभी लोग कभी भी आ सकते हैं | !! जय श्री राधे !!

राधाकांत शास्त्री

व्यवस्थापक, मानमन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

ब्रज (धाम) का स्वरूप

('रसीली ब्रजयात्रा -१' ग्रन्थ से संग्रहीत)

संकलनकर्त्री – व्यासाचार्य साध्वी श्रीजी, मान मंदिर, बरसाना

दधिविक्रयार्थं यान्त्यस्ताः कृष्ण-कृष्णेति चाब्रुवन् |
कृष्णे हि प्रेमसंसक्ता भ्रमंत्यः कुञ्जमण्डले ||

प्रेम के पागलों का एक समुदाय ही ब्रज है | गोपी दधि मटकी लेकर कुंजों में जा रही है, वनों में कौन दधि खरीदेगा? यह प्रेम की मस्ती, प्रेम की लगन, जो बड़े-बड़े योगी, ज्ञानी नहीं जान सकते | गोपी गोपाल को टेर रही है | दही का नाम भूल गयी, "दही लो, दही लो" की जगह कह रही है – "कृष्ण लो, कृष्ण लो |" यह भी भूल गई कि यह कौन-सा गाँव है, यह बरसाना है कि संकेत है कि नन्दगाँव है, कुछ पता नहीं; सिर्फ मटकी शीश पर है | उसको क्या आनन्द मिल रहा है, हम इसे समझ ही नहीं सकते, वहाँ तो केवल प्रेम ही प्रेम है | कृष्णाराधिकाओं के प्रेमाधीन होकर नन्दनन्दन साधारण गोपबालक बनकर दासता करते हैं, इसी को ब्रज कहते हैं |

गोपीभिः स्तोभितोऽनृत्यद् भगवान् बालवत् क्वचित् |
उद्गायति क्वचिन्मुग्धस्तद्वशो दारुयन्त्रवत् ||

(श्रीमद्भागवतजी १०/११/७)

गोपियाँ बालकृष्ण को लोभ दिखाकर कठपुतली की तरह नचाती थीं | रसखानजी ने भी गाया है – **"ताहि अहीर की छोहरियाँ, छछिया भर छाछ पै नाच नचावैं"** गोपियों के नचाने पर सर्वशक्तिमान् परमेश्वर बालक की तरह नाचता था | कभी ब्रजगोपियाँ उन्हें लोभ देकर कहतीं– कन्हैया ! गीत सुना, तो वह गाने लग जाते थे | एक खिलौने की तरह गोपियों के नचाये कन्हैया नाचा करते थे | नन्दभवन में कोई ब्रजगोपिका आती तो यशोदा मैया अपने कान्हा को समझाती – लाला ! मीठो व्यवहार कर, गोपियों से मीठो बोलेगो तो जल्दी तेरो ब्याह ह्वै जावेगो |

बिभर्ति क्वचिदाज्ञप्तः पीठकोन्मानपादुकम् |
बाहुक्षेपं च कुरुते स्वानां च प्रीतिमावहन् ||

(श्रीमद्भागवतजी १०/११/८)

कभी लाला कन्हैया ब्रजगोपियों के बैठने के लिए पीढ़ा ले जाते हैं, कभी वे पादुका मँगाती हैं तो बालकृष्ण दौड़कर अपने सिर पर पनहिया रखकर ले जाते हैं और उन्हें पहनाते हैं | इस तरह कठपुतली की तरह ठाकुरजी ने ब्रज में क्रीडायें की हैं और इन ब्रजदेवियों ने उन्हें नचाया है |

रसाराधनामयी 'राधारानी ब्रजयात्रा'

"अनन्यः सर्वत्र श्रीकृष्णैक दृष्टि" – 'अनन्यभाव से सर्वत्र श्रीकृष्ण ही दिखायी पड़ें' इस भाव से यात्रा करना ही 'रसीली ब्रजयात्रा' है, जिससे ब्रज के रसमय स्वरूप का साक्षात्कार हो जाता है | आज से ७० वर्ष पूर्व ब्रजयात्राओं में ३०-३० हजार यात्रीगण चलते थे, उस प्राचीन ब्रज में हैण्डपम्प नहीं थे, कुओं का ही बाहुल्य था | इतनी अधिक संख्या में यात्रियों द्वारा ब्रज में स्थान-स्थान पर कुओं के जल का उपयोग करने से कुओं में जल का अभाव हो जाता था | उस समय जो ब्रजयात्राओं की बहुलता थी, रसमयता थी, वह आज नहीं रही | आधुनिक काल में पद यात्रायें हट करके वाहन यात्रायें ही रह गयीं हैं | इसका कारण केवल शारीरिक दुर्बलता ही नहीं है अपितु भावनाओं की क्षीणता भी है | मानमन्दिर द्वारा संचालित श्रीराधारानी ब्रजयात्रा मात्र ३० वर्ष पुरानी है किन्तु यह रसमयी होने के साथ-साथ निःशुल्क होने के कारण सर्वसुलभ हो गयी है | देश के सुदूर कोने से, अत्यधिक निर्धन वर्ग के, समस्त प्रान्तों के, सभी वैष्णव सम्प्रदायों के वैष्णवगण, विदेशों के धनाढ्य वर्ग के अनिवासी भारतीय तक इस यात्रा में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं | यहाँ ४० दिनों तक २४ घंटे अनवरत् यात्रियों को अखंड

नाम संकीर्तन की मधुधारा का आस्वादन कराया जाता है | निष्काम कर्म से सकाम कर्म निश्चित ही अत्यंत नीच है | फल की इच्छा रखने वाले कृपण मनुष्यों का मुख दर्शन भी महापाप है | कामना त्याग वाला जीव ही गीता के अनुसार स्थितप्रज्ञ है | कामना मन को चंचल करती है | कामना त्याग से कर्म शक्तिसम्पन्न हो जाता है लेकिन कामना का प्रवेश होने से, पारस्परिक वैष्णव समाज के विघटन व राजस बढ़ने से वर्तमानकालीन वैष्णव सम्प्रदायों में अपने अतीतकालीन गौरव का अभाव हो गया, इसलिए ब्रज-वृन्दावन धाम में उनके द्वारा स्थापित किये गये आश्रमों, मन्दिरों व उनके द्वारा संचालित ब्रजयात्राओं में प्राचीन विशेषता नहीं रह गयी है | कारण कि सर्वत्र रजोगुण व्याप्त हो गया है और रजोगुण से ब्रजरज का रस चला जाता है |

"रज छाँड़े रज पाइये, रज राखें रज जाइ | रज सों रजहि पिछोन लै, रज सों रसिक कहाइ ||"

श्रीराधारानी ब्रजयात्रा पूर्णतया निःशुल्क, साम्प्रदायिक भेदभाव रहित एवं सतत् भगवन्नाम की सासंगता होने से यह लोकोत्तर स्तर तक पहुँच गयी है | ब्रह्मज्ञानी मोक्षार्थियों का कार्य फलाकांक्षा त्याग कर भगवन्नाम से आरम्भ होता है, इसका प्रत्यक्ष अनुभव आपको 'श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान की रसीली ब्रजयात्रा' में होगा | पूज्य सद्गुरुदेव अनन्त श्रीयुत् श्री श्रीरमेशबाबाजी महाराज की कृपा ने कितनों को पुष्ट किया, देखो – सन् १९८८ से चल रही 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' ब्रज देश के जिज्ञासुओं और प्रेमियों के लिए वरस्वरूप बन गई | ब्रज की गरिमा-महिमा से अनभिज्ञ जिज्ञासुओं का अभीष्ट बन गयी |

ब्रज के वास्तविक स्वरूप का बोध कराने वाला

सद्ग्रन्थ- 'रसीली ब्रजयात्रा'

'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' में स्थान-स्थान पर महाराजश्री द्वारा ब्रज की लीलास्थलियों के माहात्म्य का बोध तो कराया ही जाता है किन्तु फिर भी ब्रजप्रेमी रसिक भक्तजन ब्रज-सम्बन्धी पुस्तक के लिए बारम्बार आग्रह करने लगे | प्रत्येक बार "अगली यात्रा में उपलब्ध हो जायेगी कहकर यात्रियों को पुस्तक रहित ही लौटा दिया जाता था |" ब्रज सम्बन्धी ग्रन्थ प्रकाशन का कर्मक्षेत्र विशाल एवं दुरूह (अत्यंत कठिन) था किन्तु सद्गुरुदेव की कृपा शक्ति ने दुर्गम को भी सुगम कर दिया, अन्ततोगत्वा वर्षों के अथक परिश्रम और शोध के उपरान्त शास्त्र और ब्रजनिष्ठ महापुरुषों के विस्तृत प्रमाणों सहित रसीली ब्रजयात्रा ग्रन्थ के दो भागों का प्रकाशन हो गया | आधुनिक युग के महान् ब्रजाचार्य श्रीबाबामहाराज के निर्देशन में मानमन्दिर की निष्काम भागवत वक्त्री परम विदुषी साध्वी मुरलिका शर्मा जी द्वारा ब्रजमहिमा युक्त ग्रन्थ का 'रसीली ब्रजयात्रा' के नाम से दो भागों में लेखन कार्य किया गया है | "रसीली ब्रजयात्रा" ग्रन्थ व्यक्तिगत मतों व साम्प्रदायिक संकीर्ण बुद्धि के आग्रह से सर्वथा शून्य है | अहंता युक्त मान्यता से मुक्त होने के कारण सर्वविध सत्य के प्रकाशन का ही इसमें प्रयास है | 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' के जनक (ब्रज विभूति श्री श्री रमेश बाबाजी महाराज) पूज्य गुरुदेव द्वारा ब्रज की लुप्त हो रही परम महिमाशालिनी निगूढ़ लीला स्थलियों का प्राकट्य हुआ, जिनके विषय में और तो और ब्रजवासी भी अनभिज्ञ थे, ऐसे उन निर्जन लीला स्थानों के अन्वेषण का कठिन प्रयास पूज्य श्री सद्गुरुदेव के द्वारा ही हुआ | जैसे रासौली (जिसका वर्णन श्रीजीव गोस्वामीजी ने भागवत १०/२६/३ की टीका में किया है) बदरौला टीला (सूरसागर में कथा वर्णित है) सौगन्धिनी शिला, जड़खोर की गुफा, विन्ध्याचल गिरि, गन्धमादन गिरि .....अधिक कहना आवश्यक नहीं क्योंकि इन सभी लीलास्थलियों की विस्तृत प्रामाणिक कथा 'रसीली ब्रजयात्रा' पुस्तक में वर्णित की गयी है | ब्रजयात्रा के इतिहास पर घिरे हुये अनेकानेक मतभेद व साम्प्रदायिक संकीर्णता की कालिमा को हटाकर वास्तविक ब्रज का साक्षात्कार कराने की दृष्टि से ब्रजसम्बन्धी प्राचीन शास्त्रों और ब्रजरससिक प्राचीन आचार्यों के प्रमाणों की कसौटी पर कसकर 'रसीली ब्रजयात्रा' नामक दिव्य ग्रन्थ के दो भागों को ब्रजप्रेमी जिज्ञासुओं को पहुँचाने का संप्रयास किया गया है, जिससे वे ब्रज के लीलास्थलों से सम्बन्धित लीलाओं में सुगमतापूर्वक प्रवेशाधिकार प्राप्त कर लें |

वृन्दावन का वास्तविक स्वरूप

'रसीली ब्रजयात्रा -१' ग्रन्थ से संग्रहीत
संकलन/लेखन- डॉ.रामजीलाल जी शास्त्री बी.एस.सी.,एम.ए.द्वय(हिंदी,संस्कृत)
बी.एड.आचार्य (साहित्य),पी.एच.डी., अध्यक्ष- मान मन्दिर सेवा संस्थान, बरसाना

पञ्चयोजनमेवास्ति वनं मे देहरूपकम् |
कालिन्दीयं सुषुम्णाख्या परमामृतवाहिनी ||

(वृहद् गौतमीय तन्त्र)

भगवद् वाक्य है यह ! श्री भगवान् कह रहे हैं – यह पाँच योजन का वन मेरा देह है, जिसमें कालिंदी का स्थान सुषुम्ना नाड़ीवत् अत्यंत महत्वपूर्ण है | आज संकीर्ण विचारधाराओं ने धाम को संकुचित कर दिया, शास्त्रीय वचन व भगवद् वाक्यों का ही खंडन कर दिया | जो श्रीवृन्दावन पाँच योजन तक विस्तृत है, उसे संकुचित करते-करते केवल शहर रूप में स्वीकार कर लिया जबकि पाँच योजन का अर्थ है २० कोस अर्थात् ६० कि.मी तक वृन्दावन का क्षेत्रफल शास्त्रों में निर्धारित किया गया है | श्रीमद्भागवत में कहा है –

एवं तौ लोकसिद्धाभिः क्रीडाभिश्चेरतुर्वने |
नद्यद्रिद्रोणिकुञ्जेषु काननेषु सरस्सु च ||

(श्रीमद्भागवतजी १०/१८/१६)

श्रीवृन्दावन एक वह वन है जिसके अन्तर्गत अनेकों वन हैं, पर्वत हैं, सरोवर हैं, नदियाँ हैं | देखिये श्री जीवगोस्वामीजी कृत भागवत की वैष्णव तोषिणी टीका में –

"श्री वृन्दावने काननेषु तदन्तर्गतेषु
काम्यकवनादिषु...."

श्री वृन्दावन में काम्यक वन (कामा) आदि अनेकों वन आते हैं |

"श्रीवृन्दावन भूमौ नन्दीश्वराष्टकूटवरसानुधवलगिरि, सुगन्धिकादयोबहवोऽद्रयो वर्त्तन्ते |"

(श्रीजीवगोस्वामीजी कृत वैष्णव तोषणी टीका- भा.१०/२४/२५)

श्रीवृन्दावन भूमि में नन्दीश्वर पर्वत, अष्टकूट पर्वत (अष्ट महासखियों के पर्वत), सखिगिरि पर्वत ऊँचे गाँव में, सुवर्णगिरि पर्वत (सुनहरा गाँव) सुदेवी जी का, रंकुगिरि रांकोली इन्दुलेखा जी का, इन्द्रगिरि इन्द्रौली गाँव, धवल गिरि घाटा में, सौगन्धिक पर्वत जहां श्रीकृष्ण ने सौगंध खाई थी एवं अन्य बहुत से पर्वत रोहिताचल, कनकाचल, गन्धमादन, विन्ध्याचल, त्रिकूट, मैनाक आदि ऐसे बहुत से पर्वत आते हैं, तभी तो वृन्दावन का स्वरूप पाँच योजन अर्थात् ६० कि.मी में है | बहुत से अज्ञानी जन गिरिराज जी को वृन्दावन में न मानकर बहुत बड़ी भूल करते हैं | ऐसी नवीन कल्पित मान्यताओं को त्यागकर उन्हें कुछ शास्त्र वचन पर भी ध्यान देना चाहिए –

अहो वृन्दावनं रम्यं यत्र गोवर्द्धनो गिरि'

(स्कन्द पुराण)

धन्य है यह रमणीय वृन्दावन, जहां श्री गिरिराज गोवर्धन हैं | श्री हरिवंश पुराण में भी यही भगवद् वाक्य है | श्रूयते हि .....(हरिवंशपुराण, विष्णुपर्व ८/२२,२५,२८) श्रीमद्भागवत में ठाकुर जी के वत्स पाल से गोपाल बनकर वृन्दावन में प्रवेश का वर्णन मिलता है –

"वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः"

गोपाल लाल ने वृन्दावन में प्रवेश किया, कैसा था वृन्दावन, वह उपासनामय था | यहाँ का कण-कण राम-श्याम की उपासना करता है | गोपाल जी बोले – 'दाऊ दादा ! देखो तो यहाँ की लतायें, हिरनियाँ, वृक्ष आदि सब आपके स्वागत हेतु कितने उत्सुक हैं |

(१०/१५/८) आपकी दृष्टि मात्र से वृन्दावन की नदी, अद्रि माने पर्वत, पशु-पक्षी सब कृतार्थ हो रहे हैं | शुकदेव जी ने तो संकीर्ण विचारों के लिए कोई स्थान ही नहीं

छोड़ा | नदी, वन, गिरि (पर्वत), सरोवर आदि का वर्णन करने के पश्चात् यह भी कह दिया कि उक्त वर्णन किसी अन्य स्थान का नहीं अपितु वृन्दावन का व वृन्दावन के ही अंतर्गत श्री गिरिराज जी का ही है |

एवं वृन्दावनं श्रीमत् कृष्णः प्रीतमनाः पशून् |
रेमे सञ्चारयन्नद्रेः सरिद्रोधस्सु सानुगः ||

(श्रीमद्भागवतजी १०/१५/९)

इस प्रकार परम रमणीक वृन्दावन को देखकर श्यामसुन्दर अतिशय आनन्दित हुये | सखा समूह सहित श्री गिरिराज जी की तलहटी में गौचारण करते हुए नाना क्रीड़ायें करने लगे |

वृन्दावन वर्णन में यदि सरिता (नदी) शब्द आये तो मन स्वयमेव सिद्ध कर लेता है कि वे श्री यमुना जी हैं | इसी प्रकार गिरि, द्रोण अथवा सानुषु शब्द श्री गिरिराज जी का उद्घोष करता है | श्रीमद्भागवत के इन श्लोकों में स्पष्टतया वृन्दावन में गिरिराज जी का नाम लिया फिर भी संकीर्ण लोगों ने आचार्य-महापुरुषों की वाणी को काटकर वृन्दावन को केवल शहर रूप में स्वीकार कर लिया | उनकी दृष्टि में श्री गिरिराज जी, श्री बरसाना धाम, श्रीनन्दगाँव, श्री काम्यवन (कामवन) आदि वृन्दावन में नहीं हैं तो क्या श्री जीव गोस्वामी जी की वाणी असत्य है अथवा यह कहा जाये कि भगवान् की सृष्टि में कुछ ऐसे भी प्राणी हैं, जिन्हें दोपहर के प्रचण्ड सूर्य के अतिशय प्रबल प्रकाश में भी अँधेरा ही अँधेरा दिखाई पड़ता है | आप सब जानते हैं कि वह कौन सा प्राणी होता है, बताने की आवश्यकता नहीं | शुकदेव जी ने स्थान-स्थान पर हठवादियों को सावधान किया है कि श्रीवृन्दावन में गिरि (श्री गिरिराज जी), (नन्दीश्वर), (ब्रह्माचल घाटी) हैं | श्री वृन्दावन में नदी (यमुना) हैं, श्री वृन्दावन में वन (काम्यक वन) आदि हैं, श्री वृन्दावन में कुँजे हैं (गह्वर वनादि) (श्रीमद्भागवतजी १०/१८/१६) इस प्रकार राम-कृष्ण श्री वृन्दावन की नदी, पर्वत, घाटी, कुञ्ज, वन व जलाशयों में सामान्य बालकों की सभी क्रीड़ा करते हुए विचरण करने लगे | यदि रसिक बनकर संकीर्ण बनते हो तो देखो पूर्व रसिकाचार्यों के ग्रन्थ व मत – श्रीराधासुधानिधिकार कहते हैं – **अहो तेमी .....||,**

इहैवाभूत्कुंजे.....||,
श्रीगोवर्द्धन..... ||

(श्रीराधासुधानिधि २०९, २१०, २२३)

ये वे ही कुंजें हैं, वही दिव्य रासमंडल है, राधा माधव के रति रंग से प्रेम करने वाली वही श्री गोवर्धन पर्वत की कन्दरायें हैं (गोवर्धन वृन्दावन में ही है) जिसमें युगल सरकार ने रास विलास किया | ब्रज-वृन्दावन का एक-एक पर्वत युगल सरकार की रति रंग लीला से युक्त है और उसे वृन्दावन से पृथक मानना धाम के प्रति गंभीर अपराध है| आचार्यों ने कहा है कि वृन्दावन के इन पर्वतों पर बलरामजी के साथ सख्यरस की एवं श्री जी के साथ श्रृंगार रस की क्रीड़ायें सम्पन्न हुई हैं | कृष्णयामल ग्रन्थ में उल्लेख किया गया है कि श्रीकृष्ण के साथ श्री राधारानी वृन्दावन के एक-एक वन, एक-एक गिरि, एक-एक कुञ्ज-निकुंज, निभृत निकुंज में अन्तरंग रास विलास करके लौटती थीं | इसलिए ब्रज का प्रत्येक गिरि, वन, सरोवर, प्रतिदिन युगल सरकार श्री राधा माधव की आंतरिक लीला के दर्शन का आनन्द प्राप्त करता है | इस अन्तरंग लीला भूमि को छोड़कर वृन्दावन को केवल शहर रूप में ही संकुचित करना क्या नास्तिकता नहीं है? इसी संकीर्णता से धाम के स्वरूप का नाश हुआ, समाज का नाश हुआ तथा धाम की उपासना का विनाश हुआ | ऐसे संकीर्णवादी लोग धामोपासक नहीं, निश्चित ही धामनाशक हैं |

श्रीव्यासजी की वाणी में वृन्दावन –

श्रीवृन्दावन में मंजुल मरिवौ।
जीवन्मुक्त सबै ब्रजवासी पद रज सौं हित करिवौ॥
जहाँ श्याम बछरा ह्वै गायन चौंखि तृणनि कौ चरिवौ।
हरि बालक गोपिन पय पीवत हरि आंको भरि चलिवौ॥
सात रात दिन इन्द्र रिसानों गोवर्द्धन कर धरिवौ।
प्रलयमेघ मघवाहि विमद करि कहि सबसों नहि डरिवौ॥
अघ बक बकी विनाशि रास रचि सुख सागर में तरिवौ।
कुंजभवन रति पुंज चयन करि राधा के वश परिवौ॥

ऐसे प्रभुहि पीठ दै लोभरति माया जीवन जरिवौ।
श्री गुरु सुकल प्रताप व्यास रस प्रेमसिन्धु उर भरिवौ॥

व्यास जी के इस पदानुसार श्रीवृन्दावन में ही गिरिराज लीला हुई है, ब्रह्म मोह लीला हुई है, जब श्रीकृष्ण ने ब्रह्मा जी द्वारा ग्वालबालों और बछड़ों का हरण किये जाने पर १ वर्ष तक गोपबालकों और बछड़ों का रूप धारण कर ब्रज की गायों और ब्रजगोपियों का आनन्दवर्द्धन किया | बछड़ा बनकर उन्होंने ब्रज-वृन्दावन की समस्त पावन धरा पर घास चरने के बहाने ब्रज रज का आस्वादन किया | इसी प्रकार व्यास जी के अनुसार पूतना, वत्सासुर, बकासुर और अघासुर आदि दैत्यों का उद्धार भी वृन्दावन नाम से सुशोभित ८४ कोस की ब्रजभूमि में हुआ | एक अन्य पद में व्यास जी कहते हैं –

सखी हौं वृन्दावन बसिये।
तीन लोक ते न्यारी मथुरा और न दूजी दिसिये।
केशवराय गोवर्धन गोकुल पल-पल माँहि परसिये ।
नन्दकुमार महावन विहरत कोटि रसायन रसिये।
'व्यासदास' प्रभु युगल किशोरी कोटि कसौटी कसिये॥

व्यासजी के मत में भी श्रीगोवर्धन गिरिराज, श्रीमथुराजी, श्रीगोकुल आदि सब वृन्दावन के अन्तर्गत ही हैं| गर्गसंहिता के अनुसार रास के मध्य श्रीकृष्ण अंतर्धान हुए और गोवर्धन से ३ योजन (१२ कोस) दूर रोहिताचल को चले गये | आदिबद्री..... आदि क्षेत्र रोहिताचल के अंतर्गत हैं और इन सबको गर्गसंहिता में वृन्दावन के ही भीतर स्वीकार किया गया है | इसी प्रकार वृन्दावन में हो रहे रास के मध्य से जब श्रीकृष्ण अंतर्धान हुए तो उन्हें गोपियों ने एक वन में ही ढूँढा, ऐसा शुकदेव जी ने नहीं कहा | उन्होंने कहा – 'वनाद्वनम्' अर्थात् वन-वनान्तर (अनेकों वनों) में गोपाङ्गनाओं ने श्रीकृष्ण की खोज की |

गायन्त्य उच्चैरमुमेव संहता विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वनम्।
पप्रच्छुराकाशवदन्तरं बहिर्भूतेषु सन्तं पुरुषं वनस्पतीन्॥
(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/४)

श्रीधर स्वामी जी की वाणी में वृन्दावन -

श्रीधर स्वामी जी महाराज ने भी कहा 'भावार्थ दीपिका' में **"नवानि काननान्यवान्तराणि विद्यन्ते यस्मिंस्तत्"।** वृन्दावन वह समष्टि है जिसमें अनेकों व्यष्टि वन हैं। श्रीमद्भागवत की रासपंचाध्यायी में श्रीकृष्ण के रास में अंतर्धान होने पर (१०/३०/६) से (१०/३०/७) तक गोपिकाओं ने जिन पुष्पों, वृक्षों आदि का नाम लिया है, वे एक-एक वन के द्योतक हैं |

श्रीप्रबोधानंदजी की वाणी में वृन्दावन -

वृन्दावन महिमामृतकार ने तो अपने सत्रह शतकों में से लगभग प्रत्येक शतक में वृन्दावन की पहचान पर्वतों, सरोवरों, नदियों, कुञ्जों, पुष्करिणियों, वापियों तथा पुष्प वाटिकाओं से बताई है –

श्रीमद्वृन्दावनेऽस्मिन् कति कति नु सरः सिन्धु वापी तड़ागा राधाकृष्णांगरागाञ्चितमधुरजला दिव्यदिव्या न सन्ति। आश्चर्याः केलिसाराः कति कति न मणिस्वर्णभूभृत्किशोराः प्रोज्जृम्भन्ते न भासः क्षितिषु कति महामोद-मेदस्विनीषु॥ (शतक ३/७५)

प्रथम शतक का १८ वां श्लोक बड़ा विलक्षण है, जिसमें ग्रन्थकार कहते हैं कि श्रीवृन्दावन कोटि-कोटि सरोवरों, कूपों, तड़ागों (तालाबों) व पुष्प वाटिकाओं का ही समूह है। शहर तक सीमित आधुनिक वृन्दावन को ही मूल वृन्दावन मानने पर उसमें इतने सरोवर, इतने वन, कहाँ दिखाओगे? श्रीजी के करकमलों से निर्मित गहवर आदि वाटिका –

"नित्यकेलि विलासेन निर्मितं राधया स्वयम्"

जिसे स्वयं श्रीजी ने ही अपने हाथों से बनाया, इन सबको यदि वृन्दावन में स्वीकार नहीं किया जाए तो वृन्दावन का स्वरूप क्या केवल इमारतों, आलीशान कोठियों में ही माना जायेगा? श्रीवृन्दावन शतककार के अनुसार वर्णित इतने पर्वत, इतने सरोवर, इतनी कुञ्जें केवल पाँच कोस की संकुचित भूमि में भला कैसे सम्भव हैं ? अतएव इन सबका समायोजन शास्त्रीय मत पाँच योजन का वृन्दावन ही करेगा, संकीर्ण विचार नहीं ? यही रसिकाचार्यों की मान्यता है, भागवत जी का व अन्य शास्त्रों का भी यही मत है और यही मत पूर्णतया सटीक है। शेष सब कपोल कल्पना व हठवादिता है। कैसी विडम्बना है

वर्तमानकालीन संकीर्ण मति आचार्य वाणी पर ही आक्षेप करने लगी है। प्राचीन रसिकों में परस्पर कितना प्रेम था, इससे ज्ञात होता है जैसे श्रीव्यास जी महाराज ने श्री प्रबोधानंद जी के विषय में स्वयं गाया –

"श्रीप्रबोधानंद से कवि थोरे"

श्री प्रबोधानंद जी ने राधा वल्लभ लाल का यश गाया।

"जिन राधावल्लभ की लीला रस में सब रस घोरे"

सभी प्राचीन रसिकों के एक ही सिद्धांत थे, एक ही भजन की परिपाटी थी | मतों की इस एकता से ही पारस्परिक प्रेम प्रकटा, प्रसारित हुआ किन्तु आजकल के नासमझों ने तो भगवद्विग्रहों में ही भेद कर दिया, आचार्य वाणियों में भेद पैदा कर दिया, कैसी विडम्बना है, कैसी दुःखद स्थिति है?

'बरसाना' वृन्दावन से अलग नहीं

वृन्दावन के आधुनिक रसिकों के अनुसार बरसाना अलग है और वृन्दावन अलग है | उनके अनुसार वृन्दावन 'निकुंज लीला' का स्थल है और बरसाना 'भवन द्वार लीला' का स्थल है। इस प्रकार "**निगम कल्पतरोर्गलितं**" वेद रूपी कल्पतरु के रसमय फल श्रीमद्भागवत में वर्णित भागवत धर्मों के विपरीत इन आधुनिक रसिकों की सोच है | वास्तव में तो उनके लिए विभिन्न निष्ठा अन्तर्गत वैचित्रीमय रस का स्वरूप या रसोपासना तो अत्यंत दूर की वस्तु है | वस्तुतः रस का शाब्दिक ज्ञान भी उन्हें नहीं है, वे तो कुएं के मेढक की तरह अपनी निराधार धारणाओं में सिमटे हुए हैं | वे उपासना के किसी एक अंश रूपी चावल के टुकड़े को लेकर अपने को पंसारी माने हुए हैं, जबकि पंसारी के पास हर किस्म का माल होता है | चावल, दाल, चीनी, गुड़, तेल, घी आदि अनेक प्रकार के पदार्थ उसके पास होते हैं | सभी पदार्थों को रखने के कारण ही उसे पंसारी कहा जाता है, इसके विपरीत दूसरा दुकानदार किसी एक ही किस्म के चावल को अपनी दुकान पर रखकर, अपने को पंसारी घोषित करे तो वह पंसारी के रूप में स्वीकृत नहीं किया जायेगा | इसी प्रकार भक्ति के विभिन्न रसों में शांत, दास्य, वात्सल्य, सख्य और श्रृंगाररस आदि हैं | श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में वात्सल्य, सख्य और श्रृंगार रस की लीलाओं का विस्तृत वर्णन शुकदेव जी ने किया है | वृन्दावन के आधुनिक रसिक वात्सल्य, सख्य आदि लीलाओं को अपने रस में बाधक समझकर उसका खंडन करते हैं | श्रृंगार रस में भी केवल निकुंज लीला अथवा नित्य विहार को पकड़कर बैठे रहते हैं और उसी को सर्वश्रेष्ठ घोषित कर श्रृंगार रस सम्बन्धी अन्य ब्रजलीलाओं को निम्न स्तर का बताकर उसे त्याज्य मानते हैं | इतना ही नहीं केवल पाँच कोस के वृन्दावन को ही वृन्दावन मानकर शास्त्र प्रमाणित ५ योजन के वृन्दावन, जिसके अंतर्गत बरसाना, नन्दगाँव , गोवर्धन, काम्यवन आदि आते हैं उसे स्वीकार नहीं करते, वहां की राधा-माधव लीला को ब्रज लीला मानकर स्वीकार नहीं करते हैं और ५ कोसीय शहर रूपी वृन्दावन को निकुंज लीला का एकमात्र स्थल मानकर बरसाना तक को वृन्दावन से अलग और निम्न स्तर का मानते हैं | ऐसे मनगढ़ंत रसिकों का वस्तुतः रस में लेशमात्र भी प्रवेश नहीं है, रस का इन्हें तनिक भी ज्ञान नहीं है | ऐसे संकीर्ण विचार के आधुनिक रसिकों ने रसोपासना के मार्ग में भयंकर उपद्रव मचा रखा है | अतः सभी ब्रज प्रेमियों से विनय है कि सावधान रहें ऐसे वधिकों से जो धाम भगवान् को, व्यापक ब्रज वृन्दावन धाम को ही खण्डित करने में लगे हुए हैं | इनके पास न उपासना का कोई आधार है, न इनका शास्त्र सम्मत कोई सिद्धांत है, न शास्त्र वचनों का अनुपालन है | एक कार्य ये लोग अवश्य करते हैं, जो इनकी जीविका है – अनन्यता की ओट में हर प्रकार का दाँव-पेच लड़ाकर धाम स्वरूप का खण्डन करना, अपने जैसे लोगों की भीड़ बढ़ाना, सीधी- सादी जनता को भ्रांत करना, बस यही इनका कार्य विशेष है।

* गौ-सेवकों की जिज्ञासा *
श्री माताजी गौशाला का बैंक खाता दिया जा रहा है :-
SHRI MATAJI GAUSHALA
915010000494364

सीमान्त ब्रज के विषय में

'रसीली ब्रजयात्रा (द्वितीय खंड)' से संग्रहीत

लेखिका- व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी, मानमंदिर, बरसाना

महापुरुषों के द्वारा होने वाले लोकोपकारों की महत्ता और व्यापकता का वर्णन मानवीय बुद्धि की परिधि से सर्वथा बाहर है। आज पूज्यपाद श्री नारायण भट्ट गोस्वामी जी का ब्रज-बोधक अनुपम ग्रन्थ "ब्रज भक्ति विलास" ब्रज-प्रेमियों का इष्ट ग्रन्थ है| पूज्यपाद का इससे भी विशाल ग्रन्थ "बृहद् ब्रज गुणोत्सव चन्द्रिका" है, जो बहुत प्रयासों के पश्चात् भी प्राप्त न हो सका | इस अप्राप्त ग्रन्थ में ब्रज के ६००० गाँवों का उल्लेख है। यद्यपि इसकी प्राप्ति ब्रज के स्वरूप-वैभव के प्रकाश हेतु अपूर्व ही होती किन्तु श्री मानमन्दिर के ब्रज अन्वेषक गण के अथक प्रयास से श्रीराधावल्लभ सम्प्रदाय के परम रसिकाचार्य श्री हितरूप लाल जी महाराज के शिष्य चाचा वृन्दावन दास जी का दुर्लभ ग्रन्थ "ब्रज परिक्रमा" प्राप्त हुआ, जिसने ब्रज के अनेक उपेक्षित सीमावर्ती क्षेत्रों को पुनः गौरवान्वित होने का अवसर प्रदान किया। श्रीचाचावृन्दावनदासजी ने चार लाख पदों की रचना की थी, जिनमें वृन्दावन संग्रहालय में एक लाख पद ही शेष हैं। समय-समय पर धरोहर के साथ-साथ धरोहर को प्रामाणित करने वाली वाणियाँ भी लुप्त हो जाती हैं फिर यह धरा किसी महापुरुष से संविभूषित होती है, जिनके द्वारा पुनः धरोहर व प्रमाण रूप वाणियों का प्रकाश होता है। मानमन्दिर सेवा संस्थान द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ 'रसीली ब्रजयात्रा भाग -२' में श्री चाचा वृन्दावन दास जी की वाणी एवं श्रीचैतन्य महाप्रभु के सिद्ध पार्षद श्रीमद्रूप गोस्वामी जी के 'मथुरा माहात्म्य" तथा एक अन्य गौड़ीय ग्रन्थ 'भक्ति रत्नाकर' के आधार पर ही ब्रज का सीमांकन हुआ अतः इसकी प्रामाणिकता में संदेह का कोई स्थान नहीं है। विधर्मी आक्रान्ताओं(दूसरे धर्मों के विदेशी हमलावरों) द्वारा ब्रज पर होते रहे अत्याचार से कितनी ही बार ब्रज को उत्थान-पतन का सामना करना पड़ा।

बाहरी विनाशक गये तो गृहजन ही विनाशक सिद्ध होने लगे; ब्रज पर पुनः अत्याचार की आँधी आई। संकीर्ण विचारकों ने, भेदवादियों ने फिर से ब्रज को ध्वस्त कर दिया। संकीर्ण विचारों से अपना नाश तो किया ही सामाजिक क्षति भी पहुँचाई। आज ब्रज धाम के स्वरूप की विकृत प्रस्तुति इस संकीर्णता की ही देन है। अनन्त धाम को अति अल्प रूप में प्रस्तुत करना संकीर्णता का ही परिचायक है। संकीर्ण मतावलंबियों ने भोले-भाले भावुक भक्तों की नजरबन्दी कर दी। ऐसी संकट की स्थिति में भक्तों की भावना पर होने वाले इस अत्याचार के निर्मूलन हेतु परम करुणामय भक्तवत्सल प्रभु ने श्रीबज्रनाभ, श्रीमद्वल्लभाचार्य, श्रीचैतन्यदेव, श्रीरूप-सनातन, श्रीनारायणभट्ट गोस्वामी, श्री चाचा वृन्दावनदास, श्रीसूरदास, आदि अपने अभिन्न अंगरूप भक्तों को धरातल पर भेज संकीर्णता से आकीर्ण विचारों की कालिमा का निर्मूलन कराया अतः वैष्णव सम्प्रदाय के लिए आधुनिक वाणी उतनी प्रामाणिक नहीं है जितनी कि आद्याचार्यों की वाणी। वे ही निरापद सत्य का प्रत्यक्ष निष्पक्ष वर्णन कर सकते हैं। हम लोगों में तो धन, जन, पद-प्रतिष्ठा, मान-सम्मान की कामना जैसी विनाशी प्रवृत्तियाँ हैं, ये प्रवृत्तियाँ सत्य को आवृत कर देती हैं। सत्य का निराकरण तो परमार्थ-स्वार्थी अति निःस्पृह सन्त ही कर सकते हैं। ब्रज के विषय में उदाराशयी समस्त आचार्य गोस्वामी पादों का बड़ा व्यापक दृष्टिकोण रहा है।

श्रीनारायणभट्टजी के अनुसार **'ब्रज भक्तिविलास'** (षष्ठं अध्याय के आदि) में ब्रजमण्डल प्रदक्षिणा का परिमाण ८४ कोस है।

चतुर्दिक्षु प्रमाणेन पूर्वादि क्रमतोगणत्।
पूर्व भागे स्थितं कोणं वनं हास्याभिधानकं॥
भागे च दक्षिणे कोणं शुभं जन्हुवनं स्थितं।
भागे च पश्चिमे कोणे पर्वताख्य वनं स्थितं॥

भागे ह्युत्तर कोणस्यं सूर्यपतन संज्ञकं ।
इत्येता ब्रज मर्यादा चतुष्कोणाभिधायिनी

(ब्रजभक्तिविलास, ब्रह्माण्ड पुराण)

उपरोक्त श्लोकों में ब्रज के चारों कोणों पर स्थित सीमावर्ती ग्रामों का उल्लेख किया गया है –

पूर्व में हास्यवन (अलीगढ़ जिले का बरहद गाँव)।

पश्चिम में उपहार वन (गुड़गाँव जिले में सोन नदी तक)।

उत्तर में भुवनवन (भूषणवन, शेरगढ़ परगना)।

दक्षिण में जह्नुवन (आगरा जिले में बटेश्वर गाँव)।

(१) पूर्व में हास्य वन (अलीगढ़ जिले का हसनगढ़ ग्राम)।

(२) पश्चिम में पर्वत वन (कामां के निकट पहाड़ी तहसील)।

(३) दक्षिण में जह्नु वन (राजस्थान में भरतपुर जिले का जाजऊ ग्राम)।

(४) उत्तर में सूर्यपत्तन वन (उ. प्र. में अलीगढ़ जिले का ग्राम जेवर)।

एक ही नाम से एक से अधिक स्थलों का अभिलेख मिलने से हमें भ्रमित नहीं होना चाहिये। ब्रज भूमि अत्यन्त व्यापक रूप में प्रतिष्ठित रही है। पुरातन व आधुनिक विद्वानों तथा पुराणों के मध्य समायोजन भाव से यदि देखा जाय तो मथुरा से आगरा, बटेश्वर, गोहद (भिण्ड जिला), धौलपुर, जाजऊ, फतेहपुर सीकरी, भरतपुर, कुम्हेर, नदवई, नगर, पहाड़ी, नूंह, सोहना, पलवल, जेवर, अलीगढ़ (हरिदास पुर), हाथरस को परिधि के रूप में मानना युक्ति संगत होगा क्योंकि वायु पुराण में तो ब्रज भूमि का इससे भी अधिक विस्तृत (१६० कोस अर्थात् ४८० कि.मी.) स्वरूप स्वीकार किया गया है।

श्रीमद् रूप गोस्वामी पाद का व्यापक दृष्टिकोण –

"एतेन यायावरमवधिकृत्य शौकरीवटेश्वरपर्य्यन्तं मथुरामण्डलं ज्ञेयम्" (मथुरा माहात्म्यम् - १५५)

यायावर स्थान से शौकरी बटेश्वर तक मथुरामण्डल की सीमा है। यही स्वरूप भक्ति रत्नाकर में भी प्राप्त है –

मथुरा मण्डल सीमा यायावर हैते ।
शौकरी बटेश्वर पर्य्यन्त शास्त्र मते ॥
यायावर विप्र नामे यायावर स्थान ।
आदि शूकरेर नाम शौकरी आख्यान ॥
बटेश्वर शिव ये हों सवार पूजित ।
श्री सूरसेनर राज्य सर्वत्र विदित ॥
वराह दशन ह्रद एवे कह्यो लोकेते ।
यायावर शौकरी प्रसिद्ध पुराणेते ॥

(भक्तिरत्नाकर)

पद्मपुराण के अन्तर्गत यमुना माहात्म्य में यायावर क्षेत्र इस प्रकार से वर्णित है –

पूर्वकाल में यायावर नामक इन्द्रियजित विप्र ने इस सुरम्य स्थान पर तप किया अतः "यायावर विप्रस्थान" नाम से यह प्रसिद्ध हुआ। ("यायावर विप्रस्थान" नाम से प्रसिद्ध यह सुरम्य स्थल पूर्वकाल में यायावर नामक इन्द्रियजित विप्र की तपोभूमि रही।) इन्द्र-शाप से मुक्ति के लिए तप कर रहे उस विप्र को श्रीयमुनाजी पवित्र करने पधारीं, फलतः रथ पर सवार होकर उस विप्र को तो स्वर्ग की प्राप्ति हुई। इसके बाद श्रीयमुनाजी मथुरा मण्डल पधारीं, मथुरा मण्डल से कुरुदेश (शूरसेन राज्य) को पवित्र करती हुई द्वादश वनों का अतिक्रम कर विश्रान्ति तीर्थ में केशव प्रभु के चरणों में विश्राम किया। श्रीभगवदालिंगन प्राप्त कर यमुना ने आगे प्रस्थान किया, ध्रुवजी के स्थान होते हुए रेणुकाश्रम (रुणकता) पहुँचीं। अनन्तर शकुन्तला-पुत्र भरत के आश्रम होते हुए पश्चिममुखी होकर मथुरा की धरा को पवित्र करने लगीं। पुनः पूर्वमुखी होकर आदिवाराहदेव की जन्मभूमि शूकरक्षेत्र में पहुँचीं और फिर पश्चिममुखी होकर कुटिल गति से प्रवाहित होती हुई इष्टकाश्रम (वशिष्ठ मन्दिर) पहुँचीं।

श्रीमद्रूपगोस्वामी जी द्वारा विरचित "श्री श्री मथुरा माहात्म्य" में ब्रज वर्णन –

प्रथम तो श्री रूप गोस्वामीजी ने मथुरा मण्डल (ब्रज प्रदेश) के ५ विभाग किये।

१- जिसमें पहला विभाग पाँच योजन के ब्रज का स्वरूप प्रदर्शित करता है।

पञ्चयोजनमेवास्ति वनं मे देहरूपकम् ।

कालिन्दीयं सुषुम्नाख्या परमामृतवाहिनी ॥

(पद्म पुराण, नारद स्त्रीत्व प्राप्ति वर्णन-७५/१०)

किन्तु ब्रज के पंचयोजनात्मक स्वरूप से चित्त सर्वथा सन्तुष्ट नहीं हुआ अतः क्रमशः द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं पञ्चम विभाग किया –

२- द्वितीय विभाग – १ योजन पर्यंत राजधानी रूप में कहा जाता है।

३- तृतीय विभाग – द्वादश वनों का समष्टि रूप २४ कोस का है, अन्यत्र इसे ३२ वनों का समष्टि रूप भी कहा है। यथा आदिवाराह पुराण और गौतमीय तंत्र में ३२ वनों की समष्टि को मथुरामण्डल कहा गया है|

"पशव्यं नवकाननं" (श्रीमद्भागवतजी १०/११/२८)

इस श्लोक की टीका में आचार्यों ने व्याख्या में कहा –

"नवानि अवान्तराणि काननानि यस्मिन्"

बहुत से व्यष्टि वनों की समष्टि संज्ञा ही 'वृन्दावन' है।

४- चतुर्थ विभाग – **"विंशतियोजनात्मक"**

इस विभाग के अनुसार ब्रज २० योजन का है|

वाराह पुराण में भगवान् ने कहा है -

"विंशतिर्योजनानां तु माथुरं मम मण्डलम्"

मेरा मथुरामण्डल २० योजन का है।

श्रीगर्गसंहिता में भी २० योजन ब्रज का वर्णन है –

प्रागुदीच्यां बर्हिषदो दक्षिणस्यां यदोः पुरात्।
पश्चिमायां शोणपुरान्माथुरं मंडलं विदुः ॥
विंशद्योजनविस्तीर्णं सार्द्धं यद्योजनेन वै।
माथुरं मंडलं दिव्यं ब्रजमाहुर्मनीषिणः ॥

(गर्ग संहिता, वृन्दावन खण्ड - १/११, १२)

बहिषत् से ईशानकोण, यदुपुर से दक्षिण और शोणपुर से पश्चिम की भूमि को 'माथुर मण्डल' कहते हैं| मथुरामण्डल के भीतर साढ़े बीस योजन विस्तृत भूभाग को मनीषी पुरुषों ने 'दिव्य माथुर मण्डल' या 'ब्रज' बताया है| अभी भी श्रीरूपजी को लगा कि कहीं ब्रज का अति व्यापक स्वरूप संकुचित तो नहीं हो गया अतः उन्होंने पंचम विभाग किया, इस पंचम विभाग में और स्पष्ट किया –

५- पंचम विभाग –

त्रिंशद् योजनविस्तारो मथुरायाश्च मंडलः।
यत्र प्राणा विमुच्यन्ति सिद्धाः यान्ति परां गतिम् ॥

शब्दार्थ – "तीस योजन विस्तृत मथुरा मण्डल है। जहाँ प्राण त्यागने से सिद्ध होकर जीव परागति प्राप्त कर लेता है।" वायुपुराण में वशिष्ठजी व दिलीप के सम्वाद में भी वर्णित है –

चत्वारिंशद् योजनानां ततस्तु मथुरा स्मृता।
यत्र देवो हरिः साक्षात् स्वयं तिष्ठति सर्वदा ॥

४० योजन तक (१६० कोस) विस्तृत मथुरामण्डल अर्थात् ब्रज है, यहाँ सर्वदा श्रीहरि विद्यमान रहते हैं।

इसी प्रकार श्री नारायण भट्ट जी द्वारा विरचित 'भक्ति विवेक' नामक ग्रन्थ में भी पाँच विभाग प्राप्त होते हैं परन्तु आज संकीर्णता ब्रज के इस व्यापक स्वरूप के सत्य की स्वीकृति में बाधक बन रही है। संकुचित विचारों के कारण आज लोग वास्तविकता के कथन, श्रवण, अनुमोदन से हिचकिचाते हैं एवं संकुचित बातों के कथन-अनुमोदन को अनन्यता मानकर अंधे और भ्रमित होकर चक्कर काट रहे हैं। आचार्यों की वाणी किनारे कर ऐसे मनमुखी लोग महद् अपराध के साथ-साथ धाम में रहते हुए अहर्निश धामापराध, नाम लेते हुए नामापराध, सेवा करते हुए सेवापराध व हर प्रकार से अपराध का ही कार्य कर रहे हैं। बार-बार ब्रज शोचनीय स्थिति में आया, ऐसे विषम काल में आचार्य महानुभावों ने अपनी अमर वाणी से, अमर लेखनी से ब्रज की विस्तृत लक्ष्मण रेखा खींच कर सम्पूर्ण भक्त समाज को अमूल्य एवं अनुपम निधि प्रदान की है।

ब्रज रस-रसिक चाचा वृन्दावनदासजी कृत "प्राचीन ब्रज चौरासी कोस परिक्रमा" ग्रन्थ में अनेकानेक पदों के माध्यम से ब्रज के विभिन्न सीमान्त ग्रामों का वर्णन हुआ है। ब्रज सीमा का निर्धारण करते हुए पद संख्या १२७ में कुकरी, पहाड़ी .....आदि ब्रज के पश्चिमी सीमान्त ग्राम, पद संख्या – १२९ में सौंध, पुन्हाना, वनचारी, खाम्बी, वरहद, सीकरी, पद संख्या – १३४ व १३५ में पहाड़ी, सोनहद एवं पद संख्या – १३२ में आगरा, पहाड़ी,

वरहद, कंजोली, मिडावली, सिंघावली.....आदि को ब्रज के सीमावर्ती ग्रामों के रूप में स्वीकार किया है। उनके कई पदों का विवरण देना यहाँ संभव नहीं है अतः एक पद ही सीमावर्ती ग्रामों के वर्णन के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है -

नमो नमो गुरु कृपा मनाऊँ।
उर अभिलाषा उपजी जैसी वृज महिमा जु यथामति गाऊँ॥
हद सीमा के गाँम ठांमजे तिन कौ व्यौरौ कहि जु चिताऊँ।
प्रथम सौंनहद पुनबन चारी षांभी षंभ गड्यौ जु सुनाऊँ॥
ऊँची ऐंच जहा वलि जमुना ऐंची प्रगट सुचिन्ह बताऊँ।
हूंठासानी लसति हौंठये कुर वारौ व्रज हैरौ नाऊँ॥ पषौधना जु विराजत पषमें कौलानौं करारि ठहराऊँ।
बामौतीं व्रज के जु बांम अंग सींम सिवारे कौं रह ठाऊँ॥
उसरभ उसरि वसी जो व्रजतें कुरवैं हदसीकरी जताऊँ।
द्वै सैंनी जु द्वार मनो ब्रज कौ तासिर कलश मौर थर गाऊँ॥
उषरानौ जु उसर तौ व्रज तें पूरब मुरती सींम जनाऊँ।
हद जु हर्दुवा कौर भीतरी जहाँ अचल तीरथ सिरनाऊँ॥ ता आगैं कुर छौड करारौ अद रौहन जु अर्ध सम झाऊँ।
सींम नांम सौंनौंठ विदित है यौ वरहद सौं जाय मिलाऊँ॥
गोपी कृष्ण मनाई जहां ते यौ गोपी मानई गनाऊँ।
वृन्दावन हित रूप घोष की विनमित लीला पारन पाऊँ॥

(प्राचीन ब्रज चौरासी कोस परिक्रमा/ पद संख्या १२९)

यद्यपि कालक्रम से अब इन ग्रामों में कहीं-कहीं ही लीला चिन्ह रह गये हैं जो आज भी स्वयं में ब्रज-सीमा का संदेश संजोये हैं किन्तु एक बात ध्यान रहे, ब्रज के जिन सीमावर्ती ग्रामों में न कोई प्राचीन मन्दिर है, न लीला चिन्ह, न कोई इतिहास है, न पौराणिक प्रमाण, उन गाँवों में भी संस्कार रूप से भक्ति तो है ही फिर यह भूमि और इसका इतिहास तो सनातन है।

ब्रह्मण्यस्य वदान्यस्य तव दासस्य केशव।
स्मृतिर्नाद्यापि विध्वस्ता भवत्सन्दर्शनार्थिनः॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/६४/२५)

राजा नृग को संस्कार रूप भक्ति से ही गिरगिट बनने पर भी भगवद्दर्शन हो गया। काल और जन्म का व्यवधान भी कुछ न कर सका।

मनुस्मृति के अनुसार ब्रह्मर्षि देश अन्तर्गत ब्रज वर्णन –

कुरुक्षेत्रं च मत्स्यांश्च पंचालाः शूरसेनकाः।
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः॥ (मनुस्मृति - २/१९)

प्राचीन शूरसेन प्रदेश का व्यापक क्षेत्र दक्षिण में चम्बल नदी से लेकर उत्तर में वर्तमान मथुरा नगर के लगभग ५० मील उत्तर तक था। पश्चिमी सीमा मत्स्य जनपद से एवं पूर्व में दक्षिण पांचाल राज्य की सीमाओं से मिलती थी।

ब्रजभाषा-भाषी क्षेत्र और भी विस्तृत है –

मथुरा जिला, राजस्थान जिला में भरतपुर जिला, करौली में उत्तरी भाग (जो भरतपुर व धौलपुर की सीमाओं से मिला हुआ है, धौलपुर जिला, मध्य भारत में मुरैना एवं भिण्ड जिले और गिर्द-ग्वालियर का लगभग २६ अक्षांश से ऊपर का उत्तरी भाग, आगरा जिला, इटावा जिले का पश्चिमी भाग, मैनपुरी जिला, एटा जिला (जो फर्रुखाबाद जिले की सीमा से मिले हुए हैं), अलीगढ़ जिला (उत्तर-पूर्व में गंगा नदी की सीमा तक), बुलंदशहर जिले का आधा दक्षिणी भाग (पूर्व में अनूप शहर की सीध से लेकर), पलवल की सीध से गुड़गाँव जिले का दक्षिणी अंश एवं अलवर जिले का पूर्वी भाग जिसमें पुराने समय में झिरका फिरोजपुर जो आज हरियाणा में है वह भूभाग भी सम्मिलित था। इसके अतिरिक्त अन्य सुविज्ञ अन्वेषकों की दृष्टि में हम देखें तो चीनी यात्री ह्वेनसांग जब मथुरा आया तो उस समय मथुरा का विस्तार ५,००० ली था। इसके आधार पर ज्ञात होता है कि तत्कालीन ब्रज बहुत विस्तृत था। ७ वीं सदी में मथुरा राज्यान्तर्गत भरतपुर एवं धौलपुर जिले एवं मध्य भारत का उत्तरी भाग लगभग आधा रहा होगा, दक्षिण-पूर्व में मथुरा राज्य जिझौती की पश्चिमी सीमा, दक्षिण-पश्चिम में मालवा राज्य की उत्तरी सीमा से मिलती रही होगी। ७ वीं सदी के पश्चात् मथुरा की सीमाएं संकुचित हो गयीं। कारण : कन्नौज ने अपनी सीमाओं का विस्तार करते हुए मथुरा एवं अन्य पार्श्ववर्ती राज्यों के भाग को अपने अन्तर्गत कर लिया। प्राचीन ऐतिहासिक उल्लेखों के आधार पर शूरसेन-प्रदेश

(मथुरा) के उत्तर में कुरुदेश यानि दिल्ली व उसके आसपास का क्षेत्र था, दक्षिण में चेदि राज्य यानि बुंदेलखण्ड एवं उसका समीपवर्ती क्षेत्र, पूर्व में पांचाल राज्य यानि आधुनिक रुहेलखण्ड, जो कि महाभारत युद्ध के पूर्व २ भागों में विभाजित था – (१) उत्तर पांचाल (२) दक्षिण पांचाल। उत्तर पांचाल की राजधानी बरेली जिले में वर्तमान रामनगर एवं दक्षिण पांचाल की राजधानी कंपिल, जिला फर्रुखाबाद। शूरसेन के पश्चिम में मत्स्य यानि अलवर रियासत एवं जयपुर का पूर्वी भाग। कनिंघम का कथन है कि उस समय मथुरा राज्य में वर्तमान "वैराट" और "अतिरंजीखेड़ा" के बीच का सारा प्रदेश ही नहीं अपितु आगरा के दक्षिण में "नरवर" और "शिवपुरी" तक का एवं पूर्व में "काली सिंध" नदी तक का भू-भाग रहा होगा। इस प्रकार इस राज्य में मथुरा, आगरा जिलों के अतिरिक्त भरतपुर, करौली, धौलपुर एवं ग्वालियर राजा के उत्तर का आधा भाग शामिल रहा होगा। पूर्व में मथुरा राज्य की सीमा जिझौती से तथा दक्षिण में मालवा की सीमा से मिलती रही होगी। मत्स्यपुराण में इसी कृष्णलीलाभूमि को ब्रजमण्डल कहा गया है। सामर्थ्य, शक्ति, देश, काल द्वारा सीमित होने से हम सीमाबद्ध हो सकते हैं किन्तु जो असीम है उसका सीमाबद्ध होना सम्भव नहीं।

☀ ब्रज की संस्कृति ☀

संस्कार उसे कहते हैं - जो जीवन पद्धति चलाते हैं। संस्कृति उसे कहते हैं - ऐसे संस्कार जो जीव की हर क्रिया को चलाते हैं। जैसे जिस परिवार में भक्ति होती है तो वहाँ भक्ति के संस्कार हैं। ब्रज की संस्कृति वो है जो ब्रज को चलाती है, ब्रज के जीवन को चलाती है। ब्रज की उपासना करने के लिए ब्रज की संस्कृति को समझना बहुत जरुरी है। ब्रज की संस्कृति प्रेममयी है। ब्रज की संस्कृति इतनी उदार और प्रेममयी है कि वहाँ तेरा-मेरा मिट जाता है।

आज भी हम देखते हैं कि ब्रजवासियों के द्वार पर कोई भी साधु लाल, पीले, सफेद कपड़ों वाला या किसी भी सम्प्रदाय का आ जाये तो वो खाली हाथ नहीं जाता। ब्रज का सच्चा उपासक वही है जो उनकी तरह ही उदार व प्रेम सिखाने वाला बन जाये। अगर एक शब्द में पूछा जाये कि ब्रज-संस्कृति क्या है? जैसे कि अगर एक शब्द में पूछा जाये कि गीता क्या है? "निष्काम कर्म योग" एक शब्द में गीता है। वैसे ही एक शब्द में परमेश्वर का साधारणीकरण ब्रज-संस्कृति है। जहाँ सर्वशक्तिमान ब्रह्म भी आकर साधारण बन जाता है। जहाँ परमेश्वर ने अपना समस्त ऐश्वर्य छुपाकर किसी को ये भी नहीं पता लगने दिया कि वो परमेश्वर हैं। इसलिए अगर हमको भी ब्रज-उपासक बनना है तो हम भी साधारण बनें।

आप साधना चैनल पर प्रात:०६ :४० से पूज्यश्री रमेश बाबाजी महाराज

एवं प्रात: ०७ :०० बजे से ब्रजबालिका श्रीजी का नित्य सत्संग देख सकते हैं |

पारस्परिक संकीर्णता से धाम पर आघात

''रसीली ब्रजयात्रा'' ग्रन्थ -१ से संग्रहीत

संकलनकर्ता - व्यासाचार्य- राधिकेश जी, मानमंदिर, बरसाना

वृन्दावन केवल पाँच कोस का ही है, इसे व्यर्थ बकवाद के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है जबकि सभी रसिकाचार्यों ने व्यापक वृन्दावन के बारे में उद्घोषित किया है कि यह पाँच योजन का है, पाँच कोस का (आधुनिक शहरी वृन्दावन तक सीमित) नहीं | क्या धाम को संकुचित करना ही वर्तमानकालीन श्री वृन्दावन रसोपासना निष्ठा की पद्धति है? रसोपासना की मूल अवधारणा का उल्लंघन कर कोई रसिक कहाँ से बन पायेगा ? संकीर्ण लोगों के भ्रामक विचार केवल अन्य सम्प्रदायों के आचार्यों के विषय में ही उपद्रव मचा रहे हों, ऐसा नहीं है बल्कि अपने सम्प्रदाय के भी स्वरूप को वे लोग अत्यंत आश्चर्यजनक व अशास्त्रीय रूप में उपस्थित कर रहे हैं, ऐसे लोगों को अनन्य नहीं माना जा सकता, वे केवल व्यक्तिगत प्रतिष्ठा सम्बन्धी निकृष्ट धारणाओं पर ही आधारित दिखाई पड़ते हैं | आज आवश्यकता है वास्तविकता के प्रस्तुतीकरण, शुद्धचर्चा तथा साम्प्रदायिक संकीर्णता रहित वैष्णव धर्मों के प्रचार-प्रसार की | इनके अनुपालन से ही वैष्णवाचार्यों की प्रतिष्ठा, आत्मकल्याण तथा समाज एवं राष्ट्र का कल्याण सम्भव है अन्यथा कदापि नहीं |

संकीर्णता से हुआ वृन्दावन के पर्वतों का नाश

ब्रज के बहुत से पर्वतों के तो नाम से भी लोग अनभिज्ञ हैं | पूज्य श्रीबाबा महाराज ६५ वर्ष पूर्व जब ब्रज में आये थे तो उस समय खेलन वन (शेरगढ़) में यमुना किनारे बज्रकील पर्वत था | शास्त्र प्रमाणानुसार व्योमासुर इसी पर्वत पर निवास करता था | आज संकीर्णता ने खा लिया उस पर्वत के नाम-रूप-आकार को | परिणाम यह हुआ कि उस पर्वत का अब दर्शन ही नहीं है | कुशवन (कोसी) में रैवतक पर्वत था, यह भी संकीर्णता का ग्रास बन गया | आज उस पर्वत के स्थान पर केवल आलीशान इमारतों का ही दर्शन है। लैहसर से चरण पहाड़ी के मध्य स्थित सम्पूर्ण पर्वत को ही भू-माफियाओं ने समाप्त-सा ही कर दिया है। इसी प्रकार सुवर्णांचल पर्वत का भी अधिकाँश भाग नष्ट कर दिया, नीलगिरि, सखिगिरि – ऐसे कितने ही पर्वतों का अधिकाँश भाग समाप्त कर दिया गया है, ब्रज में जो पर्वत खनन माफियाओं के भयंकर प्रहार से बच गये, वह केवल श्रीमानबिहारी लाल की ही कृपा है | आचार्यों की वाणी के अनुसार ये सभी पर्वत वृन्दावन में हैं, वृन्दावन के ही हैं। आचार्यों के कथन का पालन न कर वृन्दावन से इनको अलग मानने के कारण ही इनकी सुरक्षा को गहरा आघात पहुँचा। "श्री मानमन्दिर सेवा संस्थान" जो कि प्रपूज्य गुरुदेव श्री श्री रमेश बाबा जी महाराज के संरक्षण में चल रहा है, उनके निर्देश से संस्था ने जान जोखिम में डालकर ब्रज के पर्वतों की सुरक्षा का कदम उठाया। पचास वर्षों तक संघर्ष करने के बाद आखिर में विजय हो गई। वृन्दावन केवल पाँच कोस तक ही सीमित है, इस संकीर्ण कथन ने शहर रूप वृन्दावन को छोड़कर, शास्त्र और आचार्यों द्वारा प्रमाणित वृन्दावन के अन्य स्थानों को अत्यन्त उपेक्षित कर दिया।

कलियुग का प्रभाव

कलियुग के प्रभाव से आज धाम का स्वरूप विकृत दिखाई पड़ रहा है जैसा कि महापुरुषों ने कहा –

जेते हरि के धाम काम क्रोध क्रीड़ा करें।
भगवत या कलिकाल में कहो जीव कैसे तरें॥

भागवत माहात्म्य में भी यही कहा गया है –

अत्युग्रभूरिकर्माणो नास्तिका रौरवा जनाः।
तेऽपि तिष्ठन्ति तीर्थेषु तीर्थसारस्ततो गतः॥

(श्रीमद्भागवतमाहात्म्य १/७२)

तीर्थों में ऐसे अति उग्र भयंकर कर्म करने वालों का निवास है जिनको देखना अथवा जिनसे बोलना भी भयकारक है –

सद्योगीन्द्रसुदृश्यसान्द्ररसदानन्दैकसन्मूर्तयः
सर्वेप्यद्भुतसन्महिम्नि मधुरे वृन्दावने संगता ।
ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्यद्रश्याश्च ये
सर्वान्वस्तुतया निरीक्ष्य परम स्वाराध्यबुद्धिर्मम ॥

(श्रीराधासुधानिधि - २६४)

धन-धन वृन्दावन के बामन ।
'अभयराम' ये हू बड़भागी बामन हैं कि रावन ॥

प्राचीन संतों का ऐसा कथन है कि ब्रज में ब्रजवासी, ब्रज हाँसी, ब्रजनाशी एवं ब्रज फाँसी- ये चार प्रकार के निवासी पहले भी थे और अब भी हैं। द्वापर में ब्रज हाँसी, ब्रजनाशी, ब्रज फाँसी तो कंस, पूतना, अघ, बक, वत्स, प्रलम्ब, धेनुकादिक असुर थे और वर्तमान में जो इनके अनुगामी हैं वे ब्रजनाशी, ब्रज हाँसी व ब्रज फाँसी हैं। सच्चे ब्रजवासी तो कुछ ही हैं। ऐसी स्थिति में धामोपासक धाम में रहकर अपनी साधना किस प्रकार से चलावे जबकि वर्तमान काल में ही नहीं प्रह्लाद जी के समय में भी धर्म अपने सभी अंगों के साथ व्यापार बन गया था –

मौनव्रतश्रुततपोऽध्ययनस्वधर्म व्याख्यारहोजपसमाधय आपवर्ग्याः ।
प्रायः परं पुरुष ते त्वजितेन्द्रियाणांवार्ता भवन्त्युत न वात्र तु दाम्भिकानाम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी७/९/४६)

वर्तमान में भी सर्वत्र अर्थ(धन) की ही प्रधानता दृष्टिगोचर होती है अतः व्यास जी ने कहा कि इस प्रकार से वृन्दावन में रहने से क्या लाभ –

कहा भयो वृन्दावनहि बसै ।
जौ लगि व्यापत माया तौ लगि कह घर तें निकसै ॥
धन मेवा कौ मन्दिर सेवत करत कोठरी विषै रसै ।
कोटि कोटि दंडवत करै कह भूमि लिलाट घसै ॥
मुँह मीठे, मन सीठे कपटी वचन रचन नैननि विहसै ।
मन्त्र ठगोरी कबहुँ न तन्त्र गद मानत विषय डसै ॥
कञ्चन हाथ न छुवत कमण्डल मै मिलाय विलसै ।
'व्यास' लोभ रति हरि हरिदासनि परमारथहि खसै ॥

धन का धर्म पर प्रभाव

भागवत का प्रथम सिद्धांत है –

धर्मस्य ह्यापवर्ग्यस्य नार्थोऽर्थायोपकल्पते ।
नार्थस्य धर्मैकान्तस्य कामो लाभाय हि स्मृतः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/२/९)

धर्म का लक्ष्य धन नहीं है, धन को ही लक्ष्य करके चलने वाला न वक्ता है, न श्रोता है। भागवत कथन व श्रवण की शर्त है -

कृष्णार्थीति धनार्थीति श्रोता वक्ता द्विधा मतः ।
यथा वक्ता तथा श्रोता तत्र सौख्यं विवर्धते ॥

(स्कन्दपुराणोक्त भागवतमाहात्म्य ४/३९)

वक्ता भी कृष्णार्थी हो अर्थात् केवल निष्काम भाव से कृष्ण प्रेम अथवा कृष्णप्राप्ति को ही लक्ष्य लेकर चले तथा श्रोता भी कृष्णार्थी हो अर्थात् केवल कृष्णप्रेम अथवा कृष्णप्राप्ति का लक्ष्य लेकर ही निष्काम भाव से कथा सुने तभी भागवत रस प्रवाहित होगा किन्तु यह अत्यंत दुःख का विषय है कि आज रस के स्थान पर साम्प्रदायिक संकीर्णता भक्ति की अनंत रस निधि में विष घोल रही है। इस विषमयी विषम वृत्ति से प्रतिस्पर्धा (होड़), द्वंद्व व अपने को श्रेष्ठ रसिक सिद्ध करने की सभी कुरीतियों को अपनाया जा रहा है और स्थिति यह हो गई है, जैसा कि व्यास जी का पद है –

कहत सुनत बहुतै दिन बीते भगति न मन में आई ।
श्याम कृपा बिनु साधु संग बिनु कहि कौने रति पाई ॥
अपने-अपने मत मद भूले करत आपनी भाई ।
कह्यौ हमारौ बहुत करत हैं बहुतन मे प्रभुताई ॥
मैं समझी सब काहू न समझी मैं सब हित समझाई ।
भोरे भगत हते सब तबके हमरे बहु चतुराई ॥
हमही अति परिपक्व भये औरनि के सबै कचाई ।
कहनि सुहेली रहनि दुहेलि बातनि बहुत बड़ाई ॥
हरि मन्दिर माला धरि गुरु करि जीवन के सुखदाई ।
दया दीनता दास भाव बिनु मिलैं न 'व्यास' कन्हाई ॥

यही दुर्दशा सर्वत्र देखने को मिल रही है –

श्री सूरदास जी ने भी यही कहा –

"किते दिन हरि-सुमिरन बिन खोए ।
तिलक लगाय चले स्वामी है विषयिनि के मुख जोए ॥"

गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी महाराज ने भी कहा –

"तुलसी देख सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर"

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड - १६१ ख)

स्वामी श्री हरिदास जी ने सावधान करते हुए कहा –

लोग तौं भूलैं भलें भूलैं तुम जिनि भूलौ मालाधारी ।
अपनों पति छाँड़ि औरनि सों रति ज्यौं दारनि में दारी ॥

स्याम कहत ते जीव मोते बिमुख भये सोऊ कौन जिन दूसरी करि डारी।
कहि (श्री) 'हरिदास' जग्य देवता पितरनि कों स्रद्धा भारी॥

श्री कबीर दास जी महाराज ने तो अपने प्रत्येक पद में "**कहत कबीर सुनो भई साधो**", साधो अर्थात् साधुओं को ही सम्बोधन करके उन्हे ही सदा सावधान किया|

कलिकाल के आधुनिक रसिक

आजकल श्रेष्ठ रसिक बनने की होड़ मच गई है वृन्दावन में, इसीलिए व्यास जी ने लिखा –**"भोरे रसिक हुते पहले के, हमरे अधिक चतुराई।"** आधुनिक रसिक पूर्व रसिकाचार्यों को तो भोरा बताते हैं और स्वयं को चतुर समझते हैं और इसकी सिद्धि में ब्रज लीला तथा निकुञ्ज लीला में जो जितनी बड़ी दीवार खींचता है, वह उतना ही बड़ा रसिक माना जाता है। अत्यंत आश्चर्यजनक है कि प्राचीन महान रसिकों की वाणी में ही आधुनिक रसिक आक्षेप करने लग गए।

मत्कंठे किं नखरशिखया दैत्यराजोस्मि नाहं
मैवं पीडां कुरू कुचतटे पूतना नाहमस्मि।
इत्थं कीरैरनुकृतवचः प्रेयसा संगतायाः
प्रातः श्रोष्ये तव सखि कदा केलिकुंजे मृजंती॥

(श्रीराधासुधानिधि -१६३)

यहाँ ग्रन्थकार ने पूतना लीला, तृणावर्त लीला को माना है और इसे उपरोक्त श्लोक में श्रीजी कह भी रही हैं फिर भी आज के वृन्दावन के हठवादी रसिक निकुंज लीला अथवा नित्य विहार को सर्वोपरि मानकर ब्रज की अन्य लीलाओं को अपने रस में बाधक समझते हैं और उसे स्वीकार नहीं करते हैं। स्वामी श्रीहरिदास जी ने स्पष्ट अपने पदों में साँकरी खोर, गहवर वन, बरसाना की लीला गाई है – **"हमारो दान मारयो इन"** यह बरसाने की सांकरी खोर में दानलीला का पद है| अथवा **"प्यारी जू आगे चल गह्वरवन भीतर जहाँ बोले कोइल री**|" श्रीबिहारीजी राधारानी से कहते हैं - हे प्यारी जू! आगे गह्वरवन के भीतर चलिये जहाँ मधुर स्वर में कोयल कुहक रही है| इस पद में स्वामी जी ने स्पष्ट रूप से बरसाने के गह्वरवन की लीला गायी है| श्रीहितहरिवंश महाप्रभु ने भी बरसाने की लीला गायी है|

"चलो वृषभानु गोप के द्वार"
"ये दोउ खोर खिरक गिरि गहवर विहरत कुँवरि कंठ भुज मेलि"

परन्तु इन्हीं महान रसिकाचार्यों के आधुनिक अनुयायी अपने को श्रेष्ठ रसिक मानते हैं और इसके लिए अपने आचार्यों के कथन को भी स्वीकार नहीं करते| वस्तुतः इन्हीं संकीर्ण लोगों ने धाम भगवान् का हाथ-पाँव काट दिया, धाम भगवान् का स्वरूप ही बिगाड़ दिया| 'ब्रज भक्ति विलास' ग्रन्थ में धाम भगवान् के एक-एक अंग का वर्णन किया गया है, आधुनिक रसिकों और सम्प्रदायों के अनुयायियों द्वारा उसे न मानना धाम को छिन्न-भिन्न करना ही है| आज इसी उपेक्षा के कारण ब्रज के कितने ही दिव्य पर्वत नष्ट हो गये|

साधुता का वास्तविक स्वरूप

प्रश्न है कि वर्तमान की इस स्थिति को देखकर धाम में रहकर उपासना कैसे हो और साधुता का वास्तविक स्वरुप क्या है? सुधा निधिकार व रसकुल्याकार ने इसका बड़ा उत्तम उत्तर दिया है।

ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्यदृश्याश्च ये।
सर्वान् वस्तुतया निरीक्ष्य परमस्वाराध्यबुद्धिर्मम॥

(श्रीराधासुधानिधिजी - २६४)

जो अत्यन्त क्रूर हैं, पापी हैं, असम्भाष्य हैं, असंदृश्य हैं (देखने व बात करने योग्य भी नहीं है) ऐसे लोगों में भी परम स्वाराध्य बुद्धि रखकर ब्रज में उपासना करनी होगी। ब्रज का कण-कण राधा-कृष्णमय, हमारा इष्ट है। रसकुल्याकार का कथन है कि 'स्थापना बल' की श्रद्धा रखनी पड़ेगी। धैर्य से ब्रजोपासना होगी, श्रीमद्गीता जी में भी भगवान् ने यही कहा – धीर कौन है?

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी २/१५)

सभी स्थितियों में जो समान है वही धीर है| महाकवि कालिदास जी का भी यही कथन है –

"विकार हेतौ सति विक्रियन्ते। येषां न चेतांसि तयेव धीरः॥"

विकार का हेतु हो सामने और फिर भी विकारोत्पन्न न हो, वही सच्चा धीर है| बस इसी धैर्य से धामोपासना एवं अंतिम परम लक्ष्य 'श्रीराधामाधव' युगलसरकार की प्राप्ति की जा सकती है।

संकीर्तन से ही यात्रा की सफलता

श्रीबाबामहाराज के यात्रा-सत्संग (२ दिसम्बर १९९६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री - साध्वी चंद्रमुखीजी, मानमन्दिर, बरसाना

'ब्रजयात्रा' करने के सुदृढ़ संकल्प से अतिभीषण विपत्तियाँ भी टल जाती हैं | ('सम्यक् कल्पः इति संकल्पः' अर्थात् दृढ़तापूर्वक हमने कार्य करने का विचार कर लिया है तो इसे पूर्ण करना है, चाहे बाधाएँ आयें अथवा कोई भी विषम-परिस्थिति उत्पन्न हो, अपने लक्ष्य को पूर्ण करके ही हटेंगे, इसे संकल्प कहा जाता है |)जिस समय सन् २०११ की ब्रजयात्रा के दसवें दिन पूज्य महाराजश्री अचानक हृदयाघात (हृदय का वाल्व फट जाने) के कारण गंभीर रूप से अस्वस्थ हो गए थे | उसके बाद की यात्राओं में शारीरिक अस्वस्थता के बावजूद भी यात्रियों के दर्शन एवं उनके प्रति सेवाभाव के कारण सदैव ही सम्मिलित होते रहे | श्रीराधारानी ब्रजयात्रा के प्रति अकारण द्वेष करने वाले आसुरी प्रकृति के कुछ लोग समय-समय पर अनेकों अवरोध उत्पन्न करते रहे, यात्रा को सदा के लिए समाप्त करने का उन्होंने भरसक प्रयत्न किया किन्तु उनके मनोरथ असफल हुए; यात्रा बाधित नहीं हुई, बंद नहीं हुई क्योंकि प्रतिवर्ष राधारानी के समक्ष सुदृढ़ संकल्प किया जाता है | इस यात्रा का नाम ही 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' है, किसी मनुष्य के नाम पर यह यात्रा नहीं है, इसमें किसी महन्त का नाम नहीं है | पूज्य महाराजश्री के वचनानुसार –"यदि किसी मनुष्य के नाम से यात्रा संचालित होगी तो बहुत बड़ी क्षति होगी |" इस यात्रा में आर्थिक सहयोग करने वाले भक्तजन व्यक्तिगत समस्याओं के कारण लगातार हटते चले गए किन्तु श्रीजी की कृपा से यह पूर्व से भी अधिक उत्तम विधि से परिसंचालित हो रही है | श्रीराधारानी के समक्ष यात्रा का संकल्प लेने पर ब्रजयात्रियों को ऐसा सोचना चाहिए कि अपने लक्ष्य को पूर्ण करके ही हटेंगे | बंगाल के वैष्णवजन जो सबसे अधिक संख्या में इस यात्रा में आते हैं, उन्हें इसी प्रकार यहाँ आने का परमोत्साहपूर्वक सतत् क्रम बनाए रखना चाहिए | ब्रज के प्रति निष्ठा चार प्रकार की होती है | एक तो अखंड ब्रजवास करना इस संकल्प के साथ कि ब्रज में आने के बाद अब पुनः यहाँ से बाह्य जगत में नहीं जायेंगे, जैसे श्रीचैतन्य महाप्रभु के महान परिकरों में भूगर्भ गोस्वामी, लोकनाथ गोस्वामी आदि षड् गोस्वामियों ने किया | महाप्रभु के अंतर्धान होने के पश्चात् भूगर्भ गोस्वामीजी ने प्राण विसर्जन का निश्चय कर लिया था किन्तु गौरांग महाप्रभु ने उन्हें स्वप्नादेश दिया - 'नहीं, देहत्याग मत करो, जीवित रहकर अखंड ब्रजवास करो |' इस प्रकार ब्रज की निष्ठा के अंतर्गत प्रथम स्तर है आजीवन ब्रजवास | द्वितीय स्तर पर ऐसे लोग हैं जो ब्रज में स्थायी रूप से वास नहीं कर सकते हैं तो उन्हें ब्रज के समयानुकूल पर्वों-उत्सवों में क्रमानुसार यहाँ आते रहना चाहिए और दर्शन का लाभ उठाना चाहिए जैसे बहुत से श्रद्धालुजन बरसाने की रंगीली होली, राधाष्टमी, श्रीकृष्णजन्माष्टमी आदि पर्वों पर ब्रज में आते हैं और इन मांगलिक उत्सवों का दर्शन-लाभ करते हैं; यह भी ब्रजनिष्ठा का एक अंग है | तृतीय स्तर यह है कि यहाँ जो ब्रजनिष्ठ आस्थावान भक्त रहते हैं, उनकी सेवा हम अर्थ, अन्न-वस्त्र आदि साधनों के द्वारा करें, यह भी ब्रजनिष्ठा का एक स्वरूप है | चतुर्थ स्तर यह है कि हम ब्रज में ही देहत्याग करें ताकि हमारे पार्थिव देह की राख ब्रज की परमपावनी रज में मिल जाए; इस तरह भक्तिशास्त्रों और ब्रजनिष्ठ महापुरुषों द्वारा ब्रजवास की चार पद्धतियों का वर्णन किया गया है | जो लोग प्रतिवर्ष ब्रजभूमि में पधारकर ब्रज-परिक्रमा करते हैं, वे भी ब्रजनिष्ठ हैं | श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में यही नियम है कि एकमात्र भगवन्नाम का श्रवण व कीर्तन करो, ब्रजयात्रीजन दूरस्थ प्रदेशों, नगरों और ग्रामों से अपने घर-परिवार का त्याग करके आते हैं | स्व सदन में(अपने घरों में) जो सुख-सुविधा प्राप्त रहती है, वह बाहर उपलब्ध नहीं हो सकती | ब्रज-परिक्रमा में यात्रियों को बारह-तेरह कि.मी.तक तो प्रतिदिन पैदल चलना होता है | बरसाना से प्रतिदिन वाहन ब्रजयात्रा के लिए भोजन सामग्री लेकर सुदूर पड़ाव-स्थलों की ओर जाते हैं, कभी-कभी

वाहनों को पड़ाव-स्थल के अत्यधिक दूर होने पर भोजन पहुँचाने में विलम्ब भी हो जाता है, अतः कभी तो यात्रियों को भोजन उचित समय पर उपलब्ध हो जाता है और कभी ऐसा नहीं भी हो पाता है, पदयात्रा होने के कारण कष्ट भी सहना पड़ता है | रात्रि में कभी शीत का प्रकोप होता है तो दिन में सूर्य की प्रखर किरणों से ताप का अनुभव होता है, यह एक तपस्या है | श्रीराधारानी की विशेष कृपा से इस तपस्या की प्राप्ति होती है, इसे नष्ट नहीं करना चाहिए | स्वयं सुधरें और दूसरों का भी सुधार करें | ब्रज-परिक्रमा में चलते समय जो यात्री बातचीत करते हैं, करबद्ध होकर उनसे निवेदन करें कि कृपया वार्तालाप न करें क्योंकि हम लोग यहाँ वार्ता करने के लिए नहीं आये हैं, हरिनाम का ही श्रवण-कीर्तन करें | इस प्रकार ब्रजयात्रियों द्वारा परस्पर एक-दूसरे को व्यर्थ प्रलाप से निषेध करने पर ब्रजयात्रा दिव्य बनेगी | यही दक्षिणा श्रीबाबा महाराज ब्रजयात्रियों से चाहते हैं कि वे एक भी पैसा न दें, कुछ न करें परन्तु यात्रा में निरन्तर सुप्रवाहित होने वाली रसमयी संकीर्तन-धारा में सदा-सर्वदा अवगाहन करते रहें, प्रतिक्षण भगवन्नाम से युक्त रहें और ऐसा करने से ब्रजयात्रा दिव्य बनेगी | यही आप लोगों के द्वारा की जाने वाली सेवा है और इस प्रकार की सेवा ही पूज्य बाबाश्री आप सभी यात्रीजनों से चाहते हैं और ऐसा करने से ही आप सबकी ब्रज-परिक्रमा पूर्णतः सफल होगी | ग्रंथों में ऐसा भी उल्लेख है कि प्रातःकाल स्नान कर, स्वच्छ वस्त्र धारण करके ब्रज-परिक्रमा करनी चाहिए परन्तु ऐसे नियम भी लघु (छोटे) हैं | सर्वाधिक महत्वपूर्ण नियम है कि नित्य निरंतर श्रीभगवन्नाम ग्रहण किया जाए | इसकी संपुष्टि के लिए राजा बलि का दृष्टान्त है – 'महाराज बलि' ने जैसा यज्ञ किया, वैसा आज तक कभी नहीं हुआ | उस यज्ञ में उन्होंने त्रिलोकी का दान कर दिया और दान के लिए भगवान् से अधिक श्रेष्ठ पात्र और कौन हो सकता है ?

"तस्मात् पात्रं हि पुरुषो यावानात्मा यथेयते ||"

(श्रीमद्भागवतजी ७/१४/३८)

दान के लिए सर्वोत्तम पात्र हैं 'श्रीभगवान्' | महाराज बलि ने साक्षात् भगवान् को दान दिया, कब दिया? जब वामन रूप से वह स्वयं भिक्षा माँगने आये | इसीलिए ऐसा सर्वोच्च कोटि का यज्ञ सृष्टि में आज तक कभी नहीं हुआ, जिसमें स्वयं भगवान् का भिक्षुक के रूप में पदार्पण हुआ किन्तु उस यज्ञ में भी बाधा आई | असुरों के गुरु शुक्राचार्य बलि पर नाराज हो गये, उन्होंने बलि को शापित कर दिया – 'जा, तू श्रीहीन हो जा |' गुरु के शाप से यज्ञ तो स्वयमेव ही नष्ट हो गया | उस समय भगवान् ने कहा – "हे दैत्यगुरु शुक्राचार्य जी ! अपने शिष्य बलि का यज्ञ पूर्णरूपेण सुसंपन्न कराइये |" इस प्रकार भगवान् ने असुरों के गुरु को आज्ञा दिया क्योंकि भगवान् ही निखिल ब्रह्मांडों के सार-सर्वस्व हैं, सर्वशक्तिमान और सर्वेश्वर हैं | शुक्राचार्यजी को भगवान् की आज्ञा का पालन करना पड़ा, अपने शाप के विरुद्ध उन्हें कहना पड़ा –

मन्त्रतस्तन्त्रश्छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः ।
सर्वं करोति निश्छिद्रं नामसंकीर्तनं तव ॥

(श्रीमद्भागवतजी ८/२३/१६)

संसार के जितने भी यज्ञ हैं, प्रत्येक यज्ञ में कुछ न कुछ त्रुटि शेष रह ही जाती है | मंत्र की त्रुटि रह जाती है, तंत्र (यज्ञ सम्बन्धी नियम शास्त्र) के नियम पूर्ण नहीं हो पाते, देश की कमी रह जाती है क्योंकि कुछ देश अशुद्ध होते हैं, काल की भी अशुद्धि होती है | अर्ह-पूज्यपूजा व्यतिक्रम अर्थात् कोई पूज्य व्यक्ति आया किन्तु उसका पूजन नहीं किया गया | वस्तुएं भी अशुद्ध होती हैं | वर्तमान काल में जितने भी अन्न हैं, ये सब दूषित हैं | ये विदेशी यूरिया खाद से उत्पन्न होते हैं जिसमें हड्डी का मिश्रण होता है | कलिकाल के प्रभाव से प्रत्येक वस्तु अशुद्ध है अतएव कोई भी यज्ञ परिपूर्ण नहीं होता है किन्तु महाराज बलि के यज्ञ में दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने घोषणा किया – 'इस यज्ञ में मैंने शाप दिया, इस कारण बाधा उपस्थित हो गयी है किन्तु हे भगवन् ! आपका नाम-संकीर्तन ही इस यज्ञ को पूर्ण करेगा |' शुक्राचार्य ने ऐसा मार्गदर्शन किया कि अब तक जो यज्ञ हो चुका है अथवा विश्व में भविष्य में जितने भी यज्ञ होंगे चाहे वे वैदिक हों अथवा स्मार्त यज्ञ हों, चाहे वे पौराणिक यज्ञ हों, सभी यज्ञ नाम-संकीर्तन से पूर्ण होते हैं | ब्रजयात्रा करना अत्यधिक महत्वपूर्ण यज्ञ है, इस यज्ञ को नाम-संकीर्तन ही पूर्ण अथवा सफल बनाएगा |

सर्वोपरि धन 'सेवा-आराधन'

श्रीबाबा महाराज के यात्रा-सत्संग (२ दिसम्बर १९९६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री - साध्वी गोपालप्रियाजी मानमंदिर, बरसाना

श्रीराधारानी ब्रजयात्रा के समापन पर अंतिम दिन विदाई समारोह का आयोजन किया जाता है | उस समय सभी यात्री चालीस दिवस के दीर्घकाल तक अपने गृह-परिवार से दूर होने के कारण शीघ्र ही अपने ग्रामों-नगरों की ओर रवाना होने की तैयारी करते हैं, साथ ही लम्बी अवधि तक यात्राकाल में सम्पूर्ण चालीस दिवस तक अखंड नाम संकीर्तन की त्रिभुवनपावनी, सर्वमंगलकारी अमृतधारा से उनका रोम-रोम ब्रजभक्तिरस में निमग्न हुआ रहता है तथा चौरासी कोस और सीमान्त ब्रज के अनेकों ग्रामों में उनको ब्रजवासियों के लोकातीत दिव्य प्रेम और आतिथ्य का साक्षात्कार एवं परम पूज्य करुणासिन्धु श्रीबाबा महाराज की अनंत कृपा, उनके विलक्षण ब्रजभक्तिप्रदायक व मोहान्धकार का निर्मूलन करने वाले ओजस्वी उपदेशामृत की देवदुर्लभ उपलब्धि होती है परन्तु जब अंतिम दिन दीनबन्धु पतितपावन उदार शिरोमणि महापुरुष और प्रेमभूमि ब्रजधाम से वियोग होने का क्षण आता है तो ब्रजयात्रियों का अन्तःकरण करुणरस से उद्वेलित हो उठता है और वे पूज्य महाराजश्री के समक्ष आकर विलाप करते हैं, नेत्रों से प्रवाहित होती हुई अश्रुधारा रुकने का नाम नहीं लेती, अनन्तर वे पूज्यश्री के प्रति अति आभार (कृतज्ञता) व्यक्त करते हुए श्रृद्धासुमन समर्पित करने लगते हैं |

एक बार की बात है 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' के अंतिम दिन ब्रजयात्रियों द्वारा भेंट सामग्री समर्पित करने पर परम श्रद्धेय सद्गुरुदेव ने उन्हें आगामी ब्रजयात्राओं में भेंट के वास्तविक स्वरूप और सेवाभाव के साथ ब्रजयात्रा करने के सन्दर्भ में इस प्रकार हृदयस्पर्शी उद्बोधन प्रदान किया-

"कुछ भेंट करना है तो यहाँ से अपने हृदय में यह भाव लेकर जाओ कि हम सेवा करेंगे | हम जो चीज माँगते हैं,

वह हमें दो और वह यही है कि हर व्यक्ति सेवा का व्रत ले | सदैव स्मरण रखो कि 'सेवा' धन अथवा क्रिया से नहीं होती है | एक गधा दिन भर मिट्टी ढोता है किन्तु वह सेवक के रूप में नहीं मान्य होता, निरा पशु ही माना जाता है | सेवा यही है कि हम समाज में प्रेम का विस्तार करें, एक-दूसरे के यथार्थ सहयोगी बनें | यह भेंट मुझे प्रदान करना है तो अर्पित कर जाओ | इससे तुम्हारा भी लाभ है और मेरा भी लाभ है | यदि राधारानी ब्रजयात्रा में अच्छे यात्रियों का आगमन होता है तो वैभव स्वतः आता है | वैभव तो छोटी चीज है, स्वयं भगवान् आते हैं किन्तु यदि आप लोग पारस्परिक कलह करोगे, द्वेष करोगे, जो हमारे हिन्दू समाज का बहुत बड़ा दोष है | वर्तमानकाल में हिन्दूसमाज में एकता नहीं है | पुरातन युग में जब सनातन धर्मी समाज में एकता थी तब हम जगद्गुरु थे परन्तु आज हम जगत्शिष्य हैं, यह अत्यधिक कटु सत्य है | अतः यह मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि इस चौरासी कोस पदयात्रा के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति सेवा का व्रत लेकर अपने नगर और ग्रामों में जाये | श्रीमद्भागवत के अनुसार श्रीभगवान् ने स्वयं अपने श्रीमुख से सनकादिक मुनीश्वरों के प्रति कहा है कि सेवा के प्रभाव से मैं भगवान् हूँ, लक्ष्मीवान् तथा शीलवान् हूँ | मुझमें जो कुछ भी अद्वितीय चमत्कार है, वह एकमात्र सेवा के कारण ही है –

यत्सेवयाचरणपद्मपवित्ररेणुंसद्यःक्षताखिलमलंप्रतिलब्धशीलम् ।
न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहातियस्याः प्रेक्षालवार्थ इतरे नियमान् वहन्ति ॥

(श्रीमद्भागवतजी ३/१६/७)

जब स्वयं श्रीभगवान् सेवा के प्रति पूर्णतया समर्पित हैं और अपनी भगवत्ता तथा दिव्य सद्गुणों का स्रोत **'सेवा'** को ही बताते हैं तो फिर हम लोग क्यों नहीं सेवा का मार्ग ग्रहण करते हैं ? भविष्य में जिस किसी को भी आगामी यात्राओं में (मानमंदिर द्वारा संचालित ब्रजयात्रा में) आना है तो यह निश्चय करके, इस विचार के साथ आओ कि हम सेवाभाव से यात्रा करेंगे | भेंट करने के आशय से अर्थ का संग्रह लेकर के मत आओ | इस भाव से यात्रा करो कि हम पांडाल में अन्य यात्रियों को अग्रिम(आगे की) पंक्ति में रहने का स्थान देंगे, स्वयं पीछे रहेंगे, सभी तरह की हानि सहकर सहनशील बनेंगे,

क्योंकि सहिष्णुता (सहन करने की शक्ति) से ही भक्ति आती है; वास्तविक भक्तिमयी सेवा का यही स्वरूप है, इसके स्थान पर यदि हमने चार घंटे श्रमदान किया, सेवा किया और दो मिनट पश्चात् किसी को कुत्ते की तरह फटकार दिया तो इसे सेवा नहीं कहा जाता है, यह तो कर्तृत्त्व का अहंकार है क्योंकि अहंता के वशीभूत होकर ही मनुष्य अन्य के प्रति कर्कश(कठोर) वाणी का प्रयोग करता है, 'अहं भाव' से प्रेरित होकर के वह विचार करता है कि समस्त कार्य मेरे द्वारा ही सम्पन्न किये जा रहे हैं, वस्तुतः यह सेवा नहीं है | इसलिए जो श्रद्धालुजन सेवाभाव के सहित 'राधारानी ब्रजयात्रा' में आना चाहें तो अवश्य आवें किन्तु यात्रा की निर्धारित तिथि से एक-दो दिन पूर्व आवें, जिससे उन्हें उनके अनुकूल उचित सेवा में संलग्न किया जा सके | सेवा का तात्पर्य यह नहीं है कि आपको रात्रि के पहरे पर नियुक्त किया जायेगा | यात्रा की झंडी उठाना भी सेवा है, परिक्रमा के समय माइक का तार उठाना भी सेवा है क्योंकि उसके द्वारा संकीर्तन की कलिमलहरणी, लोकोपकारी ध्वनि का चहुँओर प्रसार होता है | बेला बजाना और बैनर उठाना भी सेवा है, इस तरह के सेवा कार्यों में कोई परिश्रम नहीं होता है और इन सबसे भी अधिक महत्वपूर्ण सेवा है - ब्रजयात्रा के लिए एक अनुशासन समिति का गठन, जिसमें २५-३० व्यक्ति ऐसे हों जो पदयात्रा के समय परिक्रमार्थियों से हाथ जोड़कर बारम्बार अनुरोध करते रहें कि कृपया परिक्रमा के इस क्षण में चार-पाँच घंटे तक व्यर्थ प्रलाप न करें | विगत यात्रा में कुछ लोग ऐसा प्रण लेकर गए थे कि आगामी यात्रा में हम स्वयंसेवक बनेंगे किन्तु वास्तव में कोई सामने नहीं आया | कह जाते हैं लोग किन्तु क्रियात्मक रूप से सेवा के प्रति समर्पित लोग बहुत अल्प होते हैं, केवल मौखिक रूप से सेवा की हामी भरने वाले लोग ही बहुतायत होते हैं | सैकड़ों लोगों ने पिछले वर्ष की यात्रा में अति उत्साह के साथ सेवा का वचन दिया था, तब मैंने उनसे यही कहा था कि मैं आप लोगों से धन की याचना तो करता नहीं हूँ, आप केवल यात्रा के साथ सहयोग करो | कई लोगों ने सेवा के लिए उस समय तो सकारात्मक दृष्टिकोण दिखाया किन्तु समयानुसार सेवा हेतु उनमें से एक व्यक्ति का भी आगमन नहीं हुआ | विचार करें, यह हमारे समाज के लोगों का कितना अधिक खोखलापन है, कैसे माना जाये कि इन लोगों में सेवाभाव है ? इस नकारात्मक अनुभव के आधार पर मैं पुनः सभी से निवेदन करता हूँ कि आप लोग सेवा करना सीखिए, इससे आपके व्यक्तित्व में चमत्कार आयेगा | सेवा करने से भगवान् स्वतः तुम्हारे निकट खिंचे हुए चले आयेंगे, दौड़कर आयेंगे, बिना निमंत्रण के आयेंगे, तुम धक्का देकर उन्हें हटाने का प्रयास करोगे तो भी वह नहीं जायेंगे परन्तु कोई सेवा करना नहीं सीखता है, सेवा करने का यह तरीका नहीं है कि एक भाई दूसरे से आगे जा रहा है तो वह उसको रोक रहा है, चिल्ला रहा है, यह तो एक स्वार्थलिप्सा है | सेवक का धर्म तो सबसे कठोर होता है, इसीलिए रामायण में भरत जी ने कहा है – **सिर भर जाउँ उचित अस मोरा ।**

सब तें सेवक धरमु कठोरा ||

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड – २०३)

जिस धरती पर स्वामी के चरण पड़ते हैं, उस पृथ्वी पर मैं कैसे पाँव रख सकता हूँ ? मैं तो सेवक हूँ, सेवक का तो धर्म यही है कि जिस पृथ्वी पर स्वामी के चरण पड़ें, उस पृथ्वी पर मैं सिर के बल चलूँ अन्यथा मैं सेवक नहीं हूँ | सेवक इतने ऊँचे स्तर का निःस्वार्थी होता है | जिसके अंतःकरण में स्वार्थ है, वह सेवक नहीं है | वहाँ तो मात्र सेवा का आडम्बर (ढोंग) है | यदि तुम सेवक बन जाओगे तो स्वयं को ही नहीं, समाज को सुधार दोगे, तुम्हारे सम्पर्क में आने से ही लाखों व्यक्तियों का तुम्हारे द्वारा सुधार हो जाएगा | श्रीजी की कृपा से मानमंदिर द्वारा इतने वृहद् रूप से, निःस्वार्थ भाव से ब्रजयात्रा सम्पन्न होती है | इसका प्रबंध करने वाले हमारे यहाँ के ब्रजवासियों में विलक्षण निष्काम सेवा भाव है, ये पूर्णतया निर्लोभ होकर यात्रियों की सेवा करते हैं, ऐसा उदाहरण ब्रज में अन्यत्र कहीं नहीं है | मानमंदिर का कोई भी सदस्य यात्रियों से पैसे की याचना, धन की कामना नहीं कर सकता | किसी ने इशारे में भी किसी से कुछ देने को नहीं कहा, जैसा कि अन्य स्थानों पर लोग कहते हैं – 'सेठ जी ! आज एक बोरा चीनी का अभाव हो गया, आज भंडार में नमक

घट गया |' इस प्रकार लेने के बहुत से तौर-तरीके होते हैं परन्तु श्रीजी की कृपा से मानमंदिर में इस तरह से माँगने की कुरीतियाँ नहीं हैं | यहाँ तो खुला मार्ग है, मैं सेवा करना चाहता हूँ, किसी की जेब से पैसे खींचना नहीं चाहता हूँ, किसी की जेब से पैसा खींचने की वृत्ति को मैं पाप समझता हूँ, हिंसा मानता हूँ | ऐसा करने वाला सेवक नहीं होता, वह तो आडम्बरी (ढोंगी), पाखंडी होता है | मैं चाहता हूँ कि यदि आप लोग मुझे कुछ देना चाहते हैं तो हृदय से यह आशीर्वाद दीजिए कि मेरे अंतर्मन में **'सेवा करने की वृत्ति'** आये |

वास्तविकता तो यही है –

"मो सम कौन कुटिल खल कामी |" (श्रीसूरदासजी)

मेरे समान कुटिल, खल और कामी दुनिया में कोई नहीं होगा | यदि मैं सत्कर्मी होता तो आज तक प्रभु का साक्षात्कार हो गया होता | आज तक प्रभु की प्राप्ति नहीं हो सकी, इसका एकमात्र यही तात्पर्य है कि मैं महापापी हूँ | निश्चित रूप से मैं जैसे विचार करता हूँ, वही कहता हूँ | आप लोग भले ही मुझे दंडवत करो, बारम्बार मेरे चरण स्पर्श करो किन्तु मैं जानता हूँ कि मैं महाविमुख एवं पापी हूँ क्योंकि आज तक मुझे श्रीकृष्ण की प्राप्ति नहीं हो सकी | किस बात के लिए महात्मा हूँ, कुछ नहीं हूँ मैं, पाखंड मात्र है | मैं तो ब्रजयात्रियों से यही चाहता हूँ कि यदि आप अंतिम दिन अपने घर जाते समय मुझे कुछ देना चाहते हैं तो यही आशीर्वाद दे जाइये कि मेरे अन्दर सेवाभाव उदय हो और यदि कुछ लेना चाहते हैं तो मेरी तरफ से यह आशीर्वाद ले जाइये कि हम सेवा करेंगे, इसके अतिरिक्त और कुछ मत दीजिये और कुछ नहीं लीजिये | केवल सेवा का व्रत लेकर के यहाँ से जाइये | जिस परिवार में आप रहते हो, उसमें पिता बनकर मत रहो, स्वामी बनकर मत रहो, पति बनकर मत रहो | भगवान् कहते हैं कि जहाँ भी रहो सेवक बनकर रहो | **"मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत |"** (श्रीरामचरितमानसजी, किष्किन्धाकाण्ड – ३) इस भक्तिमार्ग को सीखो, यह भाव हृदय में धारण करो कि मैं चराचर जगत का सेवक हूँ, 'सचराचर' का अभिप्राय है सम्पूर्ण विश्व के जड़-चेतन जीव, जैसे – लता-पता, पर्वत-पेड़, नदी-सरोवर, मक्खी-मच्छर, गधा, कुत्ता, बिल्ली, बेटा-बेटी, स्त्री, पुत्रादि | यदि गुरु हो तो स्वयं को गुरु मत समझो | पिता हो तो अपने को पिता मत मानो, पति हो तो अपने को पति मत समझो | भक्ति का यह अत्यंत मीठा मार्ग है – साधु हो तो स्वयं को साधु-संत नहीं मानो | महाप्रभु चैतन्यदेव ने कहा था – **"नाहं विप्रो न च नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो"** न मैं ब्राह्मण हूँ, न क्षत्रिय हूँ, न मैं वैश्य हूँ और न ही शूद्र हूँ, **"नो वा वर्णी न च गृहपति"** मैं ब्रह्मचारी नहीं हूँ, गृहस्थ भी नहीं हूँ, **"नो वनस्थो यतिर्वा"** मैं वानप्रस्थी नहीं हूँ, साधु नही हूँ | अपने को साधु समझना भी अहंबुद्धि है |

"किन्तु प्रोद्यन्निखिलपरमानन्दपूर्णामृताब्धेर्गोपीभर्त्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ||"

यदि तुम स्वयं को साधु समझते हो तब भी गलत है, पिता समझते हो तब भी गलत है, पति समझते हो तो भी गलत है | घर का मालिक समझते हो तो यह बिल्कुल अज्ञान है, केवल एक ही बात विचार करो कि मैं ब्रजगोपियों के स्वामी श्यामसुन्दर के दासों के दासों का तुच्छ दास हूँ | कहने का आशय यही है कि अपने घर में स्वयं को पुत्रों का भी दास समझो, स्त्री का भी दास मानो किन्तु भीतर (मन) से ऐसा मानो, ऊपर से ऐसा नहीं कहा जा रहा है कि स्त्री, पुत्र के चरण स्पर्श करो | स्वयं को इन सबका दास इसलिए समझो क्योंकि इन सबमें श्रीकृष्ण का वास है | आज हमारे हिन्दू समाज की ऐसी दुर्दशा है कि परस्पर एक दूसरे से लोग द्वेष किया करते हैं | द्वेष करने वाले में भी श्रीकृष्ण को देखो, उसके आगे झुको तथा उसकी सेवा करो | यही एकमात्र श्रीकृष्ण प्राप्ति का साधन है| **"यद्वृत्त्या तुष्यते हरिः |"**

(श्रीमद्भागवतजी ३/६/३३)

अतएव सभी को ब्रजयात्रा के समापन पर सेवा का व्रत लेकर के यहाँ से जाना चाहिए एवं जिसको आगामी यात्रा में आना है, वह एक-दो दिन पूर्व, स्वयंसेवक बनकर सेवा के भाव से आये, अपने साथ संसारी धन लेकर मत आना, क्योंकि सेवाभाव ही सच्ची भक्ति व अविनाशी धन है |

धामप्रेमी पर कृपामयी की कृपा

श्रीबाबा महाराज के यात्रा-सत्संग (२ दिसम्बर १९९६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री - साध्वी ललिताजी, मानमन्दिर, बरसाना

यात्रा के सबसे अंतिम दिन लोगों को अवश्य रुकना चाहिए क्योंकि पदयात्रा के समय जिन स्थलों का हमने दर्शन किया है, उनकी कथा सुनना आवश्यक होता है | बिना लीला स्थलियों के माहात्म्य को श्रवण किये, ब्रजयात्रा का कोई औचित्य नहीं है | नारदभक्तिसूत्र में नारदजी ने कहा है कि माहात्म्य की विस्मृति नहीं होनी चाहिए क्योंकि ऐसा होने पर प्राकृत भाव उत्पन्न हो जाता है; यह अत्यधिक विचित्र तथ्य है | इस विषय में वृन्दावन के रसिकों का विरोध है | वृन्दावन के रसिकों का कथन है कि माहात्म्य ज्ञान हमारी रस भक्ति में बाधक है | इस प्रकार नारदजी और वृन्दावन के रसिकों के मत में अतिशय विरोध दृष्टिगोचर होता है परन्तु वस्तुतः यह विरोध नहीं है क्योंकि रसिक लोग भी रस का माहात्म्य तो जानते ही हैं और रस का माहात्म्य जानना भी आवश्यक है | इसलिए माहात्म्य तो पूरी तरह से भूला नहीं जा सकता | कौन-सा माहात्म्य भूलना चाहिए और कौन-सा माहात्म्य याद रखना चाहिए, इसका विवेक होना आवश्यक है | यदि हम सोचें कि माहात्म्य को पूर्णतया विस्मृत कर दें तब तो फिर स्वयं के विषय का भी माहात्म्य भूल जायेंगे | रस कितनी ऊंची वस्तु है, जिसके आधीन ब्रह्म हो जाता है | रस का भी माहात्म्य होता है (माहात्म्य का अर्थ है - बड़प्पन) | अपनी पद्धति का भी माहात्म्य अथवा बड़प्पन होता है | इसलिए सम्पूर्ण रीति से माहात्म्य को भूला नहीं जा सकता | जो भूलने योग्य है, उसी को विस्मृत किया जाता है | हम धाम की यात्रा पर गये किन्तु वहाँ की लीला-कथा को श्रवण नहीं किया जबकि धाम की लीला-कथा भी वहाँ का माहात्म्य है और उसका श्रवण करना अत्यावश्यक है | अतः धाम के लीलास्थलों का माहात्म्य श्रवण करना परमावश्यक होता है, उसके बिना कोई यात्रा, यात्रा नहीं होती है, कोई भी दर्शन, दर्शन नहीं होता है | श्रीबाबा महाराज यही प्रयत्न करते हैं कि यात्रा के दौरान जिस स्थल पर पहुँचते हैं, वहाँ की उपासना हो | जिस प्रकार भगवान् उपास्य हैं, उसी प्रकार उनका धाम भी उपास्य है | इसीलिए धाम को प्रणाम करना, नमन करना तथा धाम की परिक्रमा करना आवश्यक है | इस सम्बन्ध में एक कथा है, जिसका वर्णन लाड़सागर, ब्रजप्रेमानंद सागर आदि ग्रंथों में किया गया है, इस कथा को श्रीबाबा के गुरुदेव परम श्रद्धेय श्रीप्रियाशरण बाबा महाराज प्रायः कहा करते थे | श्रीराधारानी का नन्दगाँव में श्रीकृष्ण के साथ विवाह होता है; नन्दगाँव - बरसाने की यही उपासना है | श्रीराधारानी ब्रजयात्रा के प्रारम्भ से ही जो लोग यात्रा करते हैं, वे देखते हैं कि नन्दगाँव पड़ाव के अवसर पर बरसाना और नन्दगाँव के ब्रजवासियों की किस प्रकार प्रेमभरी मीठी नोक-झोंक होती है और वे श्रीराधिका और श्रीकृष्ण का पक्ष प्रस्तुत करते हैं | नन्दगाँव-बरसाने की वह प्राचीन परम्परा आज तक चली आ रही है, उनके आपसी ससुराल के सम्बन्ध को आज भी अतिशय प्रीतिपूर्वक निभाया जा रहा है | जब राधारानी का श्रीकृष्ण से विवाह हुआ तो वह अपनी ससुराल नन्दगाँव पहुँचीं | नववधू के आगमन पर ससुराल में नवदम्पत्ति के आवास के लिए एक नवीन कक्ष की व्यवस्था की जाती है, जिसे ब्रज में चित्रसारी कहा जाता है | नन्दबाबा ने पावन सरोवर के तट पर चित्रसारी का निर्माण करवाया था कि जब वृषभानुनंदिनी नन्दगाँव पधारेंगी तो श्यामसुन्दर के साथ उसी में निवास करेंगी जैसा कि लोकरीति के अनुसार किया जाता है | जब महाराज वृषभानु की लाड़िली नन्दगाँव आयीं तो उसी

चित्रसारी में नन्दनन्दन के साथ निवास किया | रात्रि व्यतीत होने के पश्चात् प्रातःकाल एक भंगी (महात्मा गांधीजी के शब्दों में 'हरिजन') विशाल पावन सरोवर के घाटों को झाड़ने के लिए आया | प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना कार्यक्षेत्र होता है, ऊँच-नीच का भेदभाव करने के लिए जाति व्यवस्था नहीं है | पुरातन काल में समाज के सभी वर्गों में प्रेम और सद्भाव का वातावरण था | हर व्यक्ति अपने लिए निर्धारित कार्यों में संलग्न रहता था | जैसे - समाज में कार्य के अलग-अलग विभाग (departments) होते हैं, उसी प्रकार जाति व्यवस्था का निर्माण किया गया था | उसे लोगों ने अनुचित समझा | जाति व्यवस्था की रचना घृणा के प्रसार हेतु नहीं की गयी थी | श्रीनाथजी तो एक भंगी बालक के साथ गोवर्धन की तलहटी में बालक्रीड़ा करते थे, साक्षात् भगवान् ने उसे अपना सखा बना लिया था | इसी प्रकार ब्राह्मणों की सभा छोड़कर ठाकुरजी संत श्रीरैदास जी (जो जाति से चर्मकार थे) की गोद में चले गये थे, यह सत्य घटना सिद्ध संत गोस्वामी नाभाजी कृत भक्तमाल में विस्तार से वर्णित है | ऐसा क्यों हुआ, ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि प्रेम की महफ़िल में सब बराबर के अधिकारी हैं | प्रेम में न कोई बड़ा है, न कोई छोटा है; प्रेममार्ग ऐसा विचित्र है | कर्मकांड आदि में तो भेदभाव का व्यवहार होता है | जो भंगी पावन सरोवर के विशाल घाटों को झाड़ रहा था, उसकी जाति के कारण प्रसंगवश जाति-प्रथा के सन्दर्भ में कुछ विचार व्यक्त किये गये | अब अपने पूर्व प्रसंग पर पुनः लौटते हुए नन्दगाँव - बरसाने की इस घटना पर प्रकाश डाला जा रहा है कि किस प्रकार तन्मयता व आस्था के साथ वह सफाई करने वाला कर्मचारी अपने कार्य में व्यस्त था, साथ ही मुख से वृन्दावन-वृन्दावन कह रहा था | रसिकाचार्यों ने भी कहा है कि श्रीजी के धाम का नामोच्चारण करो तो वे अत्यधिक प्रसन्न होती हैं | हरिराम व्यास जी ने लिखा है – **"वृन्दावन वृन्दावन वृन्दावन कहो रे, वृन्दावन की कुंजन की छाया में रहो रे |"** वृन्दावन का नाम जपो, धाम का नाम जपो, श्री बरसाना, नन्दगाँव, गोवर्धन आदि दिव्य धामों का नाम जपो | ये सभी नाम साक्षात् श्रीकृष्ण नाम की तरह हैं | **"भटकै मत देश-देश वेश क्यों लजावै"** लोग ब्रज छोड़कर कहाँ-कहाँ जाते हैं? व्यास जी कहते हैं – **"भटकत फिरत गौड़ गुजरात |"** कोई गौड़ देश को जाता है, कोई रामत करने धन की प्राप्ति हेतु गुजरात जाता है | कोई बंग देश जाता है जबकि वस्तुतः ये सब केवल भटकना है | इसलिए रसिकों ने कहा – **"भटकै मत देश-देश वेश क्यों लजावै |"** पैसे के लिए ब्रज के बाहर जाता है, तुझे लज्जा नहीं आती है | **"कुञ्जन के कोने पर्‌यो युगल क्यों न गावै |"** जितनी देर बाहर भटकेगा, उतनी देर साग-पात आदि रूखा-सूखा खाद्य पदार्थ खाकर युगल सरकार का गान कर | ब्रज के बाहर जाने वाले लोग तर्क देते हैं कि हम बाहर इसलिए जाते हैं कि जीवन-निर्वाह के लिए धन की प्राप्ति होती है, अन्यथा धन के अभाव में ब्रज में हमारा जीवनयापन कैसे होगा ? धामनिष्ठ रसिक महापुरुषों ने कहा – **"राखि विश्वास जिय पालन करिहैं श्रीराधा |"** अरे मूढ़ ! हृदय में यह विश्वास दृढ़तापूर्वक धारण कर ले कि ब्रजेश्वरी श्रीराधिका महारानी ब्रजवास करने वालों का पालन-पोषण करती हैं | **"वंशी अली सत्य-सत्य पूजिहैं सब साधा |"** पावन सरोवर के घाट को बुहारने वाला निम्न जातीय 'स्वच्छता-कर्मचारी' प्रातःकाल जब वृन्दावन-वृन्दावन गा रहा था तो उसकी आवाज श्रीजी को चित्रसारी में सुनायी पड़ी | उन्होंने श्यामसुन्दर से पूछा – "यह कौन है, जो प्रभात की इस पावन बेला में हमारे प्यारे धाम वृन्दावन का प्रेमपूर्वक नामोच्चारण कर रहा है |" ऐसा कहते हुए उत्सुकतापूर्वक श्री लाड़िलीजी द्वार पर आकर बाहर झाँकने लगीं, तब श्रीनन्दलाल बोले – 'हे लाड़िली जी ! आप भीतर रहो, नहीं तो आपके ऊपर कलंक लगेगा कि नववधू प्रथम बार

ससुराल में आते ही दरवाजे पर खड़े होकर बाहर के दृश्यों का अवलोकन कर रही है |'

प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनुसार ससुराल में नववधू के लिए मर्यादा पालन करना अति आवश्यक कर्तव्य था | आधुनिककालीन भोग प्रधान दूषित अंग्रेजी सभ्यता अलग है और प्राचीन भारतवर्ष की परमपावन गौरवशालिनी सभ्यता पृथक् है | भारत में तो जब विवाह के अवसर पर कन्या की घर से विदाई होती है तो वह कितना अधिक विलाप करती है और अंग्रेजी सभ्यता में विदाई के समय आधुनिक युवती अपने माता-पिता से कहती है – टाटा, बाय, बाय | भगवत्प्राप्ति कराने वाली परममंगलमयी भारतीय संस्कृति और भगवद्विमुख कराने वाली अमंगलकारिणी अंग्रेजी सभ्यता में परस्पर सम्पूर्ण रूप से विपरीतता है, एक परम प्रकाशमय श्रीभगवान् से संयोग कराती है तो दूसरी अति भयानक घोर अन्धकारमय मायिक संसार की ओर ले जाती है | विशुद्ध करुणा, ममता और प्रीति आदि दैवीय गुण तो केवल भारतवर्ष में ही हैं | यूरोप और अमेरिका जैसे पश्चिमी देशो में जहाँ केवल पति-पत्नी के चाय पीने की अलग-अलग समय-सारिणी होने के कारण तलाक हो जाता है, उन देशों में भला प्रेम कहाँ हो सकता है? अमेरिका में किसी स्त्री की सुबह ७ बजे चाय पीने की आदत थी और पति ८ बजे चाय पीता था, इतनी- सी ही तुच्छ बात पर दोनों में विवाद हो गया और परिणामस्वरूप उनमें तलाक हो गया; ऐसे नीरस-शुष्क देशों में प्रेम कहाँ है, सम्बन्ध, निर्वाह और प्रीति कहाँ है? केवल एकमात्र पशुवृत्ति है, विकास और आधुनिकता का मिथ्याहंकार करने वाले इनके बर्बर पाशविक समाज में | हमारे महान देश में सम्बन्ध है, निर्वाह है, प्रीति है, यहाँ उन ओछे देशों की तरह पशुवृत्ति नहीं है | पशुओं में सम्बन्धों का निर्वाह नहीं होता है | किसी कुत्ता का किसी कुतिया के साथ आजीवन निर्वाह नहीं होता है, इसे पशुवृत्ति कहते हैं | इसी पशुवृत्ति का निम्नस्तरीय प्रदर्शन आजकल के विकसित और आधुनिक कहलाने वाले नीच पाश्चात्य देशों में हो रहा है | प्रेम में निर्वाह केवल भारतवर्ष में ही है | यहाँ आज भी स्त्री-पुरुष विवाह के पश्चात् आजीवन एक-दूसरे को निभाते हैं | इसी महान् संस्कृति में पशु-वृत्ति के उन्मूलन हेतु कुछ अनिवार्य मर्यादायें निर्धारित की गई हैं जैसे नववधू को ससुराल में दरवाजे पर खड़े होकर बाहरी समाज को निहारने का निषेध किया गया है | इसलिए गोलोकेश्वरी श्रीराधारानी को भी लीलाकाल में नवीन विवाह के अवसर पर द्वार पर खड़े होकर बाहर देखने पर कोई कलंक न लगे, अतः नन्दनन्दन के द्वारा उन्हें सावधान किया गया और बताया गया कि यह तो हमारे गाँव का सफाई करने वाला भंगी है | श्रीजी बोलीं – "ठीक है |" नववधू होने के कारण उन्होंने इस मर्यादा का तुरंत पालन किया किन्तु नन्दलाल से कहा – "आप इसे कुछ दे दीजिए, यह तो 'वृन्दावन' नाम जप कर रहा है | नन्दनन्दन – "क्या दे दूँ?" श्रीजी – "शीत ऋतु है | आपके बाबा ने नववर के उपयुक्त जो नवीन पोशाक आपके लिए बनवायी है, शीत निवारण हेतु वही पोशाक इसे देने की कृपा करें |" श्रीश्यामसुन्दर बोले कि यदि मैं इसे अपनी नवीन पोशाक दे दूँगा तो मेरे नन्दबाबा को अत्यधिक शोक होगा क्योंकि उन्होंने अत्यंत प्रेमपूर्वक मेरे लिए यह पोशाक बनवायी थी | वह सोचेंगे कि मेरे पुत्र ने तो एक दिन भी यह बहुमूल्य पोशाक नहीं पहनी | श्रीजी – "अच्छा ! आपके बाबा को शोक होगा?" ऐसा कहते हुए करुणामयी वृषभानुनंदिनी ने शीतकालीन अपना नवीन दगला श्रीअंग से उतारा और कहा – 'मैं अपना वस्त्र इस वृन्दावन नामोच्चारण करने वाले को प्रदान कर रही हूँ, मेरे वृषभानु बाबा को इसका कोई दुःख नहीं होगा |' ऐसा कहकर उन्होंने अपना रत्नमणिजटित नवीन दगला ऊपर से फेंक दिया | वह सेवक लाड़लीलाल के मंद स्वर के वार्तालाप की ध्वनि को श्रवण कर रहा था और श्रीराधिकारानी की असीम करुणा को देखकर सहसा बोल उठा – "वृषभानु लाड़िली की जय हो, कीर्तिनंदिनी की जय हो |" कथानाशय है कि श्रीधाम का नाम लेने मात्र से करुणामयी श्रीजी की असीम कृपा की सहज संप्राप्ति हो जाती है | इस प्रकार की कथाओं को श्रीबाबामहाराज ब्रजयात्राकाल में यात्रीजनों में धाम-नाम के प्रति निष्ठा जगाने के लिए सुनाते हैं, क्योंकि धाम की महिमा का श्रवण करना अत्यंत आवश्यक है, केवल धाम में घूम रहे हैं, परिक्रमा लगा रहे हैं, चक्कर लगा रहे हैं, उससे धाम के प्रति प्रीति अथवा अनुराग का उदय नहीं होता |

सत्संग से सुदृढ़ धामनिष्ठा

श्रीबाबामहाराज के यात्रा-सत्संग (२ दिसम्बर १९९६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री - साध्वी हेमाजी, मानमंदिर, बरसाना

वैराग्यपूर्ण जीवनस्तर की तो अब कथा-वार्ता कहने-सुनने वाले भी बहुत कम लोग हैं जबकि श्रीप्रबोधानंद जी ने जिस त्याग-वैराग्यपूर्ण रहनी के साथ ब्रजवास करने का परामर्श दिया है, ऐसा लक्ष्य बन जाने पर ही श्रीकृष्णरस हृदय में आता है | श्रीराधारानी ब्रजयात्रा के पदयात्री त्रिलोक पावनी ब्रजरज सेवन के भाव से धरती पर शयन करते है, दस से चौदह पंद्रह किलोमीटर प्रतिदिन पैदल चलते हैं, इस त्याग-वैराग्य, तपोमय दिनचर्या के कारण उन्हें अनिर्वचनीय ब्रजरस की अनुभूति होती है | आधुनिक काल में २५ से ३० हजार रुपये शुल्क देकर अत्यधिक सुविधापूर्ण ब्रजयात्रा करने वाले अथवा वाहनों द्वारा शुल्क देकर ब्रजयात्रा करने वालों को मानमंदिर द्वारा संचालित ब्रजयात्रा के सदृश्य ४० दिन तक सतत् लोकातीत विलक्षण परमानंद की रसानुभूति कभी नहीं हो सकती | १९९५ की ब्रजयात्रा में हताना गाँव में रात १.३० बजे तक अखंड कीर्तन की मधुधारा में लोग नृत्य करते रहे, ऐसा प्रतीत होता था मानो रस की नदी प्रवाहित हो रही हो | ब्रजयात्री नृत्य से पृथक होना ही नहीं चाह रहे थे | इसी दिव्य रसामृत पान के लोभ से उस वर्ष से श्री बाबा महाराज ने घोषणा कर दी कि अब यह यात्रा प्रतिवर्ष इसी प्रकार रस वर्षा करेगी | अन्यथा सन् १९८८ से प्रारम्भ हुई यह यात्रा १९९५ तक तीन वर्षों में एक बार ही ब्रज गमन कर पाती थी | पूज्य श्रीबाबा के निकटस्थ परिकरों का यह प्रबल अनुरोध था – 'महाराज श्री ! प्रतिवर्ष राधारानी ब्रजयात्रा का संचालन कीजिये, जो होगा, देखा जायेगा |' उनके प्रस्ताव को महाराज श्री द्वारा स्वीकृत करने में विलम्ब नहीं हुआ और तत्क्षण ही यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया | महाराज श्री ने कह दिया- 'तुम लोग मुझे जैसे नचाओगे, मैं वैसे ही नाचूँगा |' यात्रा के प्रबंधक मानमंदिर के ब्रजवासियों के हृदय में श्रीजी विद्यमान हैं, ये साधारण लोग नहीं हैं | राधारानी के अनन्यभक्त और बरसानानिष्ठ परम त्यागी संत गोलोकवासी श्रीवीर बाबा ने भी दृढ़तापूर्वक प्रतिवर्ष ब्रजयात्रा चलाने के पक्ष में अपना मत अभिव्यक्त किया था | यात्रा के अंतिम दिन बरसाना आगमन पर यह निर्णय लिया गया था और सारा पाण्डाल उस समय हर्षातिरेक से राधारानी तथा श्रीबाबा महाराज की जय-जयकार से गूंज उठा था | श्री प्रबोधानंद जी वृन्दावन शतक में लिखते हैं – **"कामं निशीत वातं.....|"**

श्रीलाड़ली जी ने कृपापूर्वक जो अपना दिव्य धाम तुझे निवास के लिए प्रदान किया है, उसका तू त्याग क्यों करता है, ब्रज के बाहर क्यों विचरण किया करता है ? ब्रज में अद्भुत गुफाएं हैं जैसे जड़खोर की गुफा, कामवन में पर्वत के ऊपर व्योमासुर की गुफा, जिनका राधारानी ब्रजयात्रा के पदयात्रियों को प्रतिवर्ष दर्शन कराया जाता है | कामवन से थोड़ी दूर स्थित भैसेड़ा की गुफा तो बहुत विशाल है | श्री प्रबोधानंदजी कहते हैं कि शीत-ग्रीष्म के प्रकोप निवारण और निवास के लिए इन गुफाओं का आश्रय ले | आहार के लिए स्वर्ग के कल्पतरु से अधिक महिमाशाली ब्रज के दिव्य वृक्षों के पत्ते फल आदि हैं | परमोदार ब्रजवासी तो सदा ही ब्रजवास करने वाले धामनिष्ठ भक्तों के लिए अपना द्वार खुला रखते हैं, अत्यंत प्रेम से उन्हें परम शुद्ध भिक्षान्न प्रदान करते हैं | जलपान हेतु ब्रज के सरोवर और नदियाँ हैं, अन्न-जल के अभाव में किसी का भी मरण यहाँ नहीं होता फिर भी यदि कोई वैकुण्ठ से भी श्रेष्ठ लक्ष्मी जी तक को आश्रय प्रदान करने वाले इस श्रीराधामाधव की क्रीड़ास्थली ब्रजभूमि का त्याग करता है तो वह मर गया, वह मृत है, सांसारिक प्रलोभन के कारण ब्रज के बाहर घूमता है |

रे मन वृन्दाविपिन निहार |

विपिनराज सीमा के बाहर, हरि हू को न निहार ||

(श्रीभट्टजी)

रसिकों ने लिखा है –

श्रीराधा परसाद ते बसिबो वन भावै,
नहिं यह कुमति पिशाचिनी जहँ-तहँ भटकावै |

श्रीराधारानी की कृपा से ही ब्रजवास करना प्रिय लगता है नहीं तो कुमति पिशाचिनी ब्रज के बाहर ले जाकर इधर-उधर भटकाती फिरती है | इन सब बातों को विस्तार से बताने का तात्पर्य यही है कि धाम की महिमा का श्रवण करना अत्यधिक आवश्यक है | केवल पदयात्रा कर लेने से उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती है | बहुत से लोग यात्रा के अंतिम पड़ाव स्थल कामां से ही अपने घर वापस लौट जाते हैं जबकि उन्हें बरसाना में भी रुककर कामवन से बरसाना तक के मध्य पड़ने वाली लीलास्थलियों, गाँवों के माहात्म्य का श्रवण करना चाहिए | एक रात्रि और रुकने में क्या घाटा हो जायेगा ? मनुष्य संसार के मायाजाल में ऐसा फँसा हुआ है कि परमार्थ के लिए, अपने कल्याण के कार्यों के लिए ही दो घंटे का भी समय नहीं निकाल पाता | धाम की महिमा का श्रवण करने से धाम के प्रति प्रीति का वर्धन होता है, धाम के प्रति निष्ठा बढ़ती है और निष्ठा बढ़ने से मनुष्य भगवत्प्राप्ति का आधा रास्ता पार कर लेता है अर्थात् ५०% भगवान् की प्राप्ति हो गयी | श्रीरूपगोस्वामीजी ने 'भक्तिरसामृतसिन्धु' में लिखा है – **आदौ श्रद्धा ततः साधुसङ्गोऽथ भजन-क्रिया, ततोऽनर्थ निवृत्तिः स्यात्ततो निष्ठा रुचिस्ततः । अथासक्तिस्ततो भावस्ततः प्रेमाभ्युदञ्चति, साधकानामयं प्रेम्णः प्रादुर्भावं भवेत् क्रमः॥**

भगवान् या भगवत्प्रेम की प्राप्ति हेतु सबसे पहली सीढ़ी है - श्रद्धा | ये भगवान् से मिलने की सटीक सीढ़ियाँ हैं | जैसे आप किसी तिमंजिले मकान पर चढ़ते है तो पहले सीढ़ियाँ मिलती हैं | इसी प्रकार भगवान् के महल पर चढ़ने हेतु प्रथम सीढ़ी है श्रद्धा | श्रद्धा कैसे उत्पन्न होगी ? जब भगवान् और उनके धाम, नाम, गुण, लीला और जनों की महिमा सुनोगे और जब सुनोगे ही नहीं तो फिर श्रद्धा का उदय कैसे होगा ? श्री बाबा महाराज ने अपने पूज्य गुरुदेव से धामनिष्ठा के अनूठे ग्रन्थ वृन्दावन शतक आदि का अध्ययन किया, उनके मुख से ब्रज माहात्म्य को श्रवण किया | इसके प्रभाव से ६५ वर्षों से वह ब्रज में अखंडवास कर रहे हैं, कभी भी उनकी इच्छा जाग्रत नहीं हुई कि ब्रज के बाहर चलकर देखा जाये कि संसार में क्या हो रहा है ? अन्ततोगत्वा श्रवण का ही तो यह प्रभाव है | इसीलिए शास्त्रों में कहा गया कि जब आप सत्संग में माहात्म्य का श्रवण करोगे तभी श्रद्धा उत्पन्न होगी | बिना सत्संग के श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती है | कपिल भगवान् ने श्रद्धा की महिमा बतायी है | श्रद्धा वह खजाना है, श्रद्धा वह शक्ति है, जो भगवान् से मिला देती है | श्रद्धा रूपी संपत्ति कैसे प्राप्त होगी ? जैसे यदि आप व्यापार करना चाहते हैं तो उसके लिए धन की आवश्यकता होगी | अंग्रेजी में कहा गया है – 'MONEY BEGETS MONEY, धन से धन उत्पन्न होता है | इसलिए धन के अभाव में तुम व्यापार कैसे करोगे ? अध्यात्म के व्यापार (Spritual Business) में श्रद्धा ही संपत्ति है | यदि आपके पास श्रद्धा रूपी सम्पत्ति नहीं है तो अध्यात्म का व्यापार आप नहीं कर सकते | आप कुछ नहीं प्राप्त कर सकते | श्रद्धा पैदा कैसे होगी ? भागवत में कपिल भगवान् ने कहा –

सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः ।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥

(श्रीमद्भागवतजी ३/२५/२५)

वहाँ जाओ, जहाँ भगवान् की कथाएँ होती हैं जो श्रद्धा-विश्वास के उत्पन्न होने की प्रमुख हेतु हैं | जो कथायें हृदय और कर्ण के लिए रसायन हैं | रसायन उस औषधि को कहते हैं, जो खाने में मीठी हो और जिसके द्वारा रोग का पूर्णतः उन्मूलन हो जाये | इसलिए विशुद्ध संतों के पास जाओ, उनके निकट जाने से, उनके सत्संग, उनके प्रवचन के श्रवण से अपने आप ही श्रद्धा का खजाना मिल जायेगा, जो लाखों जन्मों के भजन से भी नहीं मिलता है, वह थोड़ी ही देर में मिल जायेगा | सत्संग के परिणामस्वरूप श्रद्धा, भक्ति व रति की प्राप्ति बिना श्रम के हो जायेगी | ऐसा स्वयं भगवान ने कहा है | इसीलिए श्रवण अनिवार्य है | जिस लीला स्थली पर जायें, वहां क्या लीला हुई है, वहाँ का माहात्म्य श्रवण करना अत्यावश्यक है, फिर भी आधे से अधिक लोग यात्रा के कामवन से बरसाना पहुँचते ही पलायन कर जाते हैं और अंतिम दिन बरसाना पड़ाव स्थल पर सत्संग के समय आधे से कम लोग उपस्थित रहते हैं | वे ऐसा विचार नहीं करते कि जब दीर्घकाल तक संध्याकालीन सत्संग का लाभ उठाते रहे तो अंतिम दिन बरसाने में भी लीला-कथा का श्रवण करें |

धामाश्रय से सहज साध्य-संप्राप्ति

श्रीबाबामहाराज के यात्रा-सत्संग (१७/११/२०१३) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री - साध्वी कालिंदीजी, मानमंदिर, बरसाना

श्रीकृष्णलीला नित्य है, सदा से होती आई है और सदा-सर्वदा होती रहेगी, इसका प्रमाण श्रीमद्भागवत है | नारदजी ने ध्रुव को उपदेश दिया था –

तत्तात गच्छ भद्रं ते यमुनायास्तटं शुचि ।
पुण्यं मधुवनं यत्र सान्निध्यं नित्यदा हरेः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/८/४२)

हे तात ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम यमुना तट स्थित मधुवन चले जाओ, जहाँ भगवान् का नित्य सानिध्य है | कल्प आते हैं, चले जाते हैं | काल निरंतर गतिशील बना रहता है किन्तु ब्रजभूमि की यही अक्षय व अलौकिक महिमा है कि यहाँ श्रीभगवान् का नित्य निवास रहता है | इसलिए नारदजी ने ध्रुवजी को कानपुर के निकट स्थित गंगातटवर्ती बिठूर से यमुनातटवर्ती मधुवन (ब्रज) भेजा था क्योंकि नारदजी चाहते थे कि इस बालक को शीघ्र ही भगवत्प्राप्ति हो जाये और शीघ्र भगवत्प्राप्ति के लिए ही यह त्रिलोकपावनी ब्रज-वसुंधरा है | नारदजी ने ध्रुवजी से यह भी कहा था कि भगवान् के अनंत अवतार, अनंत लीलायें हैं परन्तु ब्रजभूमि में पहुँचने पर तुम श्रीकृष्ण लीलाओं को गाना –

स्वेच्छावतारचरितैरचिन्त्यनिजमायया ।
करिष्यत्युत्तमश्लोकस्तद्ध्यायेद्धृदयङ्गमम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/८/५७)

उन श्रीकृष्ण चरित्रों का गान करना जिन्हें वह अवतरित होकर करेंगे | 'करेंगे' इसलिए कहा क्योंकि उस समय तक श्रीकृष्ण का अवतरण नहीं हुआ था | नारदजी ने ध्रुव को परामर्श दिया कि भविष्य में होने वाली श्रीकृष्ण लीलाओं का ध्यान करना | 'करिष्यति'- भविष्यकाल की लीलाओं का नारदजी ने उपदेश किया | श्रीकृष्ण इतने सरल हैं, जो ब्रज के गाँवों में गँवार बन जाते हैं, जिनके चरणकमलों की सेवा स्वयं वैकुंठ की अधीश्वरी लक्ष्मीजी किया करती हैं | ब्रज में श्रीकृष्ण की इतनी सरल लीलायें हैं कि वे भगवान् अनंत हैं, आज तक कोई उनको बाँध नहीं पाया परन्तु –

स्वमातुः स्विन्नगात्राया विस्रस्तकबरस्रजः ।
दृष्ट्वा परिश्रमं कृष्णः कृपयाऽऽसीत् स्वबन्धने ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/९/१८)

उन अनंत भगवान् को यशोदा मैया ने रस्सी से बाँध दिया

एवं निगूढात्मगतिः स्वमायया, गोपात्मजत्वंचरितैर्विडम्बयन् ।
रेमे रमालालितपादपल्लवो, ग्राम्यैः समं ग्राम्यवदीशचेष्टितः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/१५/१९)

यहाँ 'ग्राम्यै' शब्द का अर्थ है गँवारों के साथ | प्रेमभूमि ब्रज में अनंत महिमाशाली भगवान् गँवारों के साथ ग्रामीण चेष्टाएँ करता है अर्थात् स्वयं भी गँवार बन जाता है, चोरी करता है, ग्वालबालों का उच्छिष्ठ (जूठन) खाता है | इस प्रकार जितनी भी गँवारपने की लीलायें भगवान् करता है, तो कहाँ करता है? जिस स्थली पर ऐसी मधुरातिमधुर रसमयी, प्रेममयी लीलायें करता है, उसी सुर-मुनि-वन्दित पावन धरा का नाम है 'ब्रज' | जिस भगवान् के बारे में उपरोक्त श्लोक में कहा गया कि लक्ष्मीजी जिनके चरणों को केवल दबाती ही नहीं हैं, लालन करती हैं, सहलाती हैं, वे भगवान् इस तरह प्रीतिपूर्वक चरण संवाहन करने वाली लक्ष्मीजी का त्यागकर ब्रज में गँवारों के साथ रमण कर रहे हैं | ब्रज क्या है? सर्वशक्तिमान परमेश्वर की गँवार-लीला का केंद्र ही ब्रज है | इतना ही नहीं गँवार भी अन्ततोगत्वा गाँव में रहता है तो कुछ न कुछ उसके हृदय में ग्रामीण सभ्यता रहती है किन्तु ब्रज तो ऐसा स्थल है जहाँ भगवान् वनचर अर्थात् जंगली बन गया | श्रीमद्भागवतान्तर्गत युगलगीत में ब्रजगोपिकायें कहती हैं –

अनुचरैः समनुवर्णितवीर्य आदिपूरुष इवाचलभूतिः ।
वनचरो गिरितटेषु चरन्तीर्वेणुनाऽऽह्वयति गाः स यदा हि ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३५/८)

यह आदिपुरुष भगवान् इस ब्रजभूमि में आकर वनचर बन गया है, जब यह वंशीवादन के द्वारा गायों का आह्वान करता है, उस समय वन की समस्त लतायें और वृक्ष कृष्णमय बन जाते हैं, उनके रोम-रोम में श्रीकृष्ण व्याप्त हो जाते हैं –

वनलतास्तरव आत्मनि विष्णुं व्यञ्जयन्त्य इव पुष्पफलाढ्याः ।
प्रणतभारविटपा मधुधाराः प्रेमहृष्टतनवः ससृजुः स्म ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३५/९)

लतायें तथा वृक्ष फलों व फूलों से परिपूर्ण हो जाते हैं और उनके भार से वे झुक जाते हैं, फलों के भार से झुकना तो एक बहाना है | लताओं और वृक्षों के भीतर कृष्णरूप से जो रस भर गया है, उस रस के भार से लतायें और वृक्ष इस प्रकार झुक जाते हैं कि प्रत्येक लता से मधुधारायें प्रवाहित होने लगती हैं और सम्पूर्ण ब्रज-अवनि मधुधारा से भर जाती है | वह मधु कैसा है? अनास्वादित मधु है | हम लोग तो जिस मधु का आस्वादन करते हैं वह मधुमक्खी का जूठन होता है किन्तु ब्रजधरा जिस मधु की धारा से आप्लावित हो जाती है, वह मधु अनास्वादित है | ब्रजभूमि पर उस मधु की धारा बह रही है, इसलिए महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने लिखा – "**यमुना मधुरा वीची मधुरा**" जहाँ सब कुछ मधुर है, यह ऐसा ब्रज है | यहाँ भगवान् नित्य निवास करते हैं, इसका एक कारण ये है कि यहाँ (ब्रज में) रसिक भक्तजन निरन्तर निष्ठापूर्वक रहते हैं | चतुःश्लोकी भागवत के उपदेश में भगवान् ने ब्रह्माजी से सर्वप्रथम यही कहा था –

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः ।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥

(श्रीमद्भागवतजी २/९/३१)

मैं जितना हूँ, जैसी मेरी भावसत्ता है, जैसा मेरा स्वरूप है यानि प्रलय के पूर्व भी भगवान् इसी रूप में थे –

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परम् ।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी २/९/३२)

मैं प्रलय के पूर्व भी था अर्थात् भगवान् का सनातन रूप, सनातन गुण, सनातन कर्म, सनातन लीलायें हैं | उनका ज्ञान सबको नहीं होता है | भगवान् ने ब्रह्माजी से कहा कि इनका ज्ञान तुम्हें मेरी कृपा से होगा | भगवान् के रूप, गुण, लीला और धाम की महिमा का ज्ञान उनकी कृपा से होता है | कितने ही लोग ब्रज में आते हैं और चले जाते हैं किन्तु जिस पर श्रीजी की विशेष कृपा होती है, वह इस धाम में सुदृढ़ निष्ठापूर्वक रहता है और धाम में जो भावपूर्वक निवास करता है, उसे अवश्य श्रीजी की प्राप्ति होती है, निश्चित श्रीकृष्ण मिलते हैं | श्री 'वृन्दावन शतक' के रचयिता श्रीपाद प्रबोधानंद जी ने अपने ग्रन्थ में बताया है कि यह ब्रज-वृन्दावन धाम कैसा है?

श्रीमद्वृन्दावन भुवि महानन्द साम्राज्य कन्दे,
वन्दे यं कञ्चन विरचिता मृत्यु वास प्रतिज्ञम् ।
श्री गान्धर्वा रसिकतिलकौ स्वेषु योग्यं यमेकं,
ज्ञात्वान्योन्यं विमृशत इदं कीदृशोन्वेष भाव्यः ॥

(श्रीवृन्दावन शतक ६/३५**)**

परमानन्द के साम्राज्य का मूल है यह 'ब्रज' | उसकी हम वन्दना करते हैं जो यहाँ निष्ठापूर्वक निवास करता है | निष्ठा वाला ब्रजभक्त इसी ब्रजभूमि में अपना जीवन समाप्त करता है | हजारों-लाखों लोगों में कोई एक ही ब्रज के प्रति ऐसा आस्थावान होता है, जो इस प्रकार मृत्युपर्यन्त अखंड ब्रजवास करता है | हमारे सामने जो ब्रज दृष्टिगोचर होता है उसमें तो मिट्टी ही मिट्टी है, यहाँ स्थान-स्थान पर मल-मूत्र का प्रदूषण भी दिखाई पड़ता है | यहाँ ऐसा क्या है, जो एक दृढ़निष्ठावान रसिकभक्त मृत्युवास की प्रतिज्ञा लेकर रह रहा है | शतककार कहते हैं कि स्थूल दृष्टि से दिखने वाले इस भौम वृन्दावन में ऐसी शक्ति है कि यहाँ पर नित्यधाम का अवतरण होता है | जिस प्रकार भगवान् का अवतार होता है, उसी प्रकार धाम का भी अवतार होता है

श्रीमद्भागवत-कथा का रसास्वादन कराने वालीं मानमन्दिर की बाल-आराधिकाएँ

लेखनकर्त्री - साध्वी वत्सला जी, मानमंदिर, बरसाना

वेदरूपी कल्पवृक्ष का सुपक्व (पका हुआ) फल श्रीमद्भागवत, जिसके श्रवण से प्रेतयोनि को प्राप्त हुए महापतित प्राणी का भी उद्धार हो जाता है | अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि आज भारतवर्ष में ऐसी परमहंस संहिता को धनोपार्जन करने का अच्छा-खासा साधन बना लिया गया है | देश में स्थान-स्थान पर भागवत सप्ताह यज्ञ का आयोजन होता रहता है और अधिकांश भागवत वक्ता कथा के नाम पर आयोजकों से मोटी रकम वसूल करते हैं | महर्षि वेदव्यासजी ने श्रीमद्भागवत की रचना इसलिए की थी कि कलियुग के प्रहार से प्रताड़ित (जर्जरित) जनमानस का भागवत-सप्ताह-कथा के श्रवण से सुगमतापूर्वक कल्याण हो सके परन्तु अत्यधिक दुःखद त्रासदी यह हुई कि कलियुग ने श्रीमद्भागवत कथा को भी अपने शिकंजे में कस लिया और इसीलिये भागवत- कथा को वर्तमान में बहुत बड़ा व्यवसाय बना लिया गया है | श्रीमद्भागवत कथा के व्यापारीकरण में वृद्धि को देखकर मानगढ़ के अति निःस्पृह संत परमपूज्य श्रीरमेशबाबामहाराज द्वारा श्रीमद्भागवत के निष्काम वक्ताओं को तैयार किया गया है जिसमें डॉ० श्रीरामजी लाल शर्मा (पण्डितजी), साध्वी मुरलिकाजी, बाल साध्वी श्रीजी और श्रीराधिकेशजी के नाम उल्लेखनीय हैं, इसी श्रंखला में हाल ही में बाबाश्री द्वारा भागवत-कथा की निष्काम प्रवक्त्रियों के रूप में अध्ययनशील व सतत् साधनरत बालसाध्वियों का विशुद्ध भक्ति के संप्रचारार्थ सृजन किया गया गया है, इन आराधिकाओं की श्रीभागवत-सप्ताह-कथा का आयोजन अभी इस समय मानमंदिर में ही किया जा रहा है |

साध्वी **गौरीजी**

मानमंदिर के व्यवस्थापक, विशुद्ध ब्रजवासी एवं बाल्यावस्था से ही पूज्य श्रीबाबामहाराज के शरणापन्न श्रीराधाकान्त शास्त्री (भैयाजी), जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन अपने सद्गुरुदेव (बाबाश्री) के मार्गदर्शन में अति निःस्पृह भाव से ब्रजवसुन्धरा एवं मानमंदिर संस्थान की सेवा में समर्पित कर दिया, उन्ही के लघु भ्राता श्रीअम्बरीषजी, जो कि परम निष्किंचन भाव से मानमंदिर की सेवा में पूर्णतः समर्पित हैं, उन्हीं की पुत्री साध्वी गौरीजी ने दिनाँक ११-१०-२०१८ से १७-१०-२०१८ तक मानगढ़ पर श्रोताओं को श्रीमद्भागवत-कथा का रसास्वादन कराया | जन्मजात ब्रजवासिनी गौरीजी कुशल भजन-गायिका भी हैं और वे कई वर्षों से मानमंदिर के आराधनाभवन रसमंडप में सायंकालीन संकीर्तन में श्रीबाबामहाराज के पदगान के पश्चात् (बाबाश्री द्वारा रचित) ब्रज-रसियाओं का प्रतिदिन गायन करतीं हैं तथा श्रीमानमंदिर द्वारा प्रतिवर्ष संचालित श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में भी वह शास्त्रीय संगीत पर आधारित युगल मंत्र की धुनों का विलक्षण गानकला के साथ संकीर्तन करती हैं |

बालसाध्वी **दयाजी**

११ वर्षीया बालसाध्वी दयाजी, शिवपुरी (जिला) म०प्र० की रहने वाली हैं | वह भी आठ वर्ष की अल्पायु में अपनी मातृभूमि एवं माता-पिता तथा भाई-बहनों की मोह-ममता का पूर्ण त्यागकर सद्गुरुदेव श्रीबाबामहाराज की छत्रछाया में मानगढ़ पर अनासक्त भाव से विशुद्ध भक्तिमय जीवन व्यतीत कर रहीं हैं | दिनाँक २६-१०-२०१८ से १-११-२०१८ तक मानमंदिर पर उनकी श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा का कार्यक्रम हुआ है | बालसाध्वी दयाजी अत्यंत ओजस्विनी वक्त्री हैं और पूज्य बाबाश्री के निर्देशन में

उन्होंने श्रीमद्भागवत तथा अन्य भक्तिशास्त्रों का अध्ययन किया है |

बालसाध्वी **मधुवनीजी**

बारह वर्षीया बालसाध्वी मधुवनीजी दिनाँक ३-११-२०१८ से ९-११-२०१८ तक मानगढ़ पर कलिमलहारिणी परमपावनी श्रीमद्भागवत कथा का वाचन कर रही हैं | बालसाध्वी मधुवनीजी का ४- वर्ष की अल्पायु में ही अपने पिताश्री के साथ मानगढ़ पर आगमन हो गया था | उन्होंने पूज्य गुरुदेव की छत्रछाया में गीता, भागवत, रामचरितमानस एवं अन्य भक्तिशास्त्रों तथा संगीत कला का गहन अध्ययन किया है, यह परमकृपामयी श्रीजी का ही अलौकिक चमत्कार है | दस वर्ष की आयु में आप मीरबाई की जन्मभूमि 'मेड़ता' में मीराबाईजी का चरित्र (कथा) कह चुकी हैं | वर्तमान में आप रस मंडप में नित्य होने वाली सांयकालीन आराधना 'रसिया-गायन की अनुकरण-लीला' में ठाकुरजी (श्रीकृष्ण) का अभिनय कर सभी भक्तों को भाव-विभोर कर देती हैं |

बालसाध्वी **विरागाजी**

सन् २०१४ की राधारानी ब्रजयात्रा में काशी के निकट सोनभद्र से अपने दादी-बाबा के साथ पधारी १० वर्षीया बालसाध्वी विरागाजी को यात्रा के प्रभाव और पूर्वजन्मों के संस्कारवश संसार से ऐसी उपरामता का अनुभव हुआ कि वह दादी-बाबा के साथ घर वापस नहीं गयीं | अनन्तर माता-पिता द्वारा जबरदस्ती ले जाने पर वह श्रीधाम बरसाना, गह्वरवन में स्थित मानमंदिर के वियोग में अपने गृह पर निरन्तर विलाप करती रहीं, भोजन करना छोड़ दिया, समय मिलने पर वह गाँव के मंदिर में ग्रामवासियों को भगवत्कथा सुनाकर भगवद्भक्ति का उपदेश करती रहीं | श्रीमानमंदिर निवास हेतु अत्यधिक हठ के कारण माता-पिता को उस ब्रजप्रेमिका बाल-आराधिका को मानमंदिर वापस भेजना पड़ा | वर्तमान में वह श्रीबाबा महाराज की विशेष कृपापात्र बन गई हैं और उन्हीं के आनुगत्य में उन्होंने श्रीमद्भागवत, गीता और रामायण आदि भक्ति-शास्त्रों का अध्ययन किया और बाबाश्री की आज्ञा से दिनाँक ११-११-२०१८ से १७-११-२०१८ तक मानगढ़ पर त्रिलोक उद्धारिणी श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा के द्वारा श्रद्धालु श्रोताओं को लाभान्वित करेंगी |

बालसाध्वी **हरिप्रेमाजी**

पन्द्रह वर्षीया बरेली (उ०प्र०) निवासिनी हरिप्रेमाजी ने अपने गृहनगर से अंग्रेजी भाषा के माध्यम से १० वीं कक्षा तक अध्ययन किया है | इनकी माता श्रीमती कुंजनिधिजी, बरेली में अंग्रेजी भाषा की अध्यापिका हैं | पिता श्रीतरुण कुमार जी प्राइवेट एकाउन्टेंट हैं | इनकी नानी श्रीमती अर्चनाजी लगभग २५ वर्षों से बरसाना में अखण्ड ब्रजवास कर रही हैं | अतः इनको भक्ति के संस्कार बचपन से ही मिले हैं | श्रीमानमंदिर, बरसाना आने पर यहाँ के भक्तिमय वातावरण और पूज्य श्रीबाबा महाराज के परम त्यागमय, भक्ति - ज्ञान विभूषित एवं अनन्त करुणा वात्सल्यमय व्यक्तित्व ने हरिप्रेमाजी को ऐसा प्रभावित किया कि ये माता-पिता के प्रबल आग्रह पर भी निजगृह (जन्मभूमि) को वापस नहीं गयीं और स्वेच्छा से मानमंदिर-वास करते हुए महाराजश्री के निर्देशन में भक्ति-शास्त्रों का गहन अध्ययन कर रही हैं | अंग्रेजी भाषा का अच्छा ज्ञान होने के कारण वह इसी भाषा के माध्यम से दिनाँक १९-११-२०१८ से २५-११-२०१८ तक श्रीमद्भागवत सप्ताह के सन्दर्भ में सारयुक्त प्रवचन करेंगी |

Worshipping The *Dhäma*

(Shri Brajmohan Das ji)

nirmäya käru mukuöaà nava candrakeëa
guïjäbhiräracita häram upäharanté
våndäöavé nava nikuïja gåhädhi devyäù
çré rädhike tava kadä bhavitäsmi däsé

(Çré Rädhä Rasa Sudhänidhi — 31)

There are four aspects which make up the sentiment of this *sloka* i.e. the abode, the mistress of the abode (Çréji), *sakhé* (maidservant) and service. There are three manifestations of the *dhäma*. First, is the *nitya-dhäma* (eternal abode), the second is the abode that descends (Just like how *bhagavän* is spiritual, even the *dhäma* is spiritual and thus, it can descend), the third is the place where the *dhäma* descends. This is the earthly manifestation of the *dhäma*, which is visible to our eyes and where we are sitting. This is the most accessible aspect among the four, where one can worship and in fact, we are worshipping. Just like how the holy name of the Lord is accessible to all; even a thief or a sinner can chant the holy name; all including pious and impious souls can easily access the holy name, similarly, this *dhäma* is also easily accessible to all. Any pious soul or a sinner can come here. Just like how Näma Prabhu is merciful on all and doesn't let anybody return empty handed, similarly, *dhäma* Mahäräja also doesn't let anybody return empty handed. Just like how one's sinful reactions are eradicated by performing *näma saìkértana*, similarly, by serving *dhäma bhagavän*, one's sins are nullified. Just like how the Lord or His holy name fulfils the desires of all, similarly, *dhäma bhagavän* also fulfils the desire of all living entities. Countless people circumambulate Giriräjji and their desires get fulfilled. Never mind material desires, *dhäma bhagavän* makes one meet the Lord also. Thus, there is a need for one to develop faith and love toward the *dhäma*, which has manifested on this earthly plane.

श्रीराधारानी ब्रजयात्रा – २०१८ (प्रथम दिवस, संकल्प समारोह)

संकलनकर्त्री /लेखिका – बाल साध्वी अर्चनाजी ,मानमंदिर, बरसाना

२२ अक्टूबर २०१८ को श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा श्रीमानबिहारीलाल के नेतृत्त्व में श्रीराधारानी ब्रजयात्रा प्रारम्भ हो चुकी है | यात्रा का प्रथम तीन दिन का पड़ाव बरसाने में ही था | इस पदयात्रा में देश-विदेश से १० हजार से अधिक यात्री सम्मिलित हैं | यात्रियों की संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है | सम्भावना है की हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी यात्रियों की संख्या १५ से २० हजार के बीच पहुँच जाएगी | प्रथम दिन यात्रा पाण्डाल में पूज्य श्रीबाबामहाराज की उपस्थिति एवं मार्गदर्शन में यात्रियों को ४० दिवसीय पदयात्रा के सफलतापूर्ण निष्पादन के लिए संकल्प दिलाया गया | श्रीराधामानबिहारीलाल के पूजन के साथ श्रीजी स्वरूपा बाल साध्वियों तथा गौमाता का भी पूजन किया गया | 'पदयात्रियों की ब्रज- परिक्रमा सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सके' इस उद्देश्य से अपने अत्यन्त संक्षिप्त आशीर्वचन में परम श्रद्धेय श्रीबाबामहाराज ने अपने उद्गार इस प्रकार व्यक्त किये – "सभी यात्रियों को मेरा प्रणाम...!!

'समस्त यात्री कृष्णस्वरूप हैं' उनके प्रति यही भाव रखना चाहिए और इसी में यात्रा की सफलता है | किसी यात्री का अपमान न हो जाए क्योंकि सभी यात्री भगवत्स्वरूप हैं | ब्रज-परिक्रमा करने वालों की सफलता के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त तो यह है कि वे यात्रा करते समय बातें न करें, मौन रहें | दूसरी बात यह है कि भक्तजनों के द्वारा अखण्ड रूप से किये जा रहे संकीर्तन को सदा श्रवण करते रहें, स्वयं भी कीर्तन करते हुए चलें, इसके अतिरिक्त अपने घर-परिवार-सम्बन्धी व उनकी समस्याएँ आदि सब कुछ भूल जाएँ | यात्रा के ४० दिन तक बिल्कुल देह-गेह आदि को भूल जाएँ कि हम कौन, किस ग्राम-नगर के हैं; ऐसा ही ब्रजगोपिकाओं ने किया था –

तन्मनस्कास्तदलापास्तद्विचेष्टास्तदात्मिकाः।
तद्गुणानेवगायन्त्यो नात्मागाराणि सस्मरुः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/४४) रास में श्रीश्यामसुन्दर के अन्तर्धान होने पर ब्रजांगनाओं द्वारा उनका अन्वेषण किये जाने पर वे सर्वथा भूल गईं कि हम कौन हैं, किस गाँव की हैं, क्या हमारा नाम है; उन्होंने श्रीकृष्ण का इस प्रकार से गुणगान किया कि सब कुछ भूल गईं, स्वयं को भी भूल गईं, वही सच्चा संकीर्तन है जिसमें सब कुछ भूल जाओ, केवल संकीर्तन ही याद रहे | श्रीराधारानी कृपा करें, उन्हीं की कृपा से यात्रा सम्पन्न होगी |.....जय श्री राधे !!"

श्रीबाबामहाराज के आशीर्वचन के उपरान्त श्रीमाताजी गौशाला में पचास हजार से अधिक गौवंश का दर्शन करते हुए पदयात्री श्रीराधारानी की अष्टमहासखियों में श्रीरंगदेवी सखी के ग्राम डभारा पहुँचे, जहाँ उन्होंने क्रमशः सूर्यकुण्ड, नौबारी-चौबारी (राधारानी द्वारा गुड़िया-गुड्डा खेलने की स्थली), रत्नकुण्ड (जहाँ श्रीजी द्वारा रत्नों का खेत में बीजारोपण करने पर वृक्षों से बड़े-बड़े बहुमूल्य रत्न स्वतः उत्पन्न हो गए), श्यामशिला (पर्वत पर स्थित शिला जिस पर आसीन होकर कृष्ण-बलराम नौबारी-चौबारी पर क्रीड़ारत वृषभानुनन्दिनी का दर्शन करते थे) आदि रसमयी लीला स्थलियों का दर्शन किया | इसके उपरान्त मानमन्दिर की ओजस्विनी भागवत-प्रवक्त्री बालसाध्वी श्रीजी ने अपने संध्याकालीन प्रवचन में यात्रियों को उनके द्वारा दर्शन किये गए लीलास्थलों की महिमा का विस्तार से श्रवण कराया | यात्रा के द्वितीय दिवस यात्रीजन प्रभात की ब्रह्मबेला में श्रीराधारानी की मंगला आरती का दर्शन करने मन्दिर (वृषभानुभवन 'भानुगढ़') में पहुँचे और ब्रह्माचल पर्वत के शिखरों पर स्थित मानगढ़, दानगढ़, मयूरकुटी, विलासगढ़, साँकरीखोर तथा चित्रासखी के ग्राम चिकसौली में माहेश्वरीसर, दोहनीकुण्ड आदि स्थलों का भी दर्शन किया | तृतीय दिवस पदयात्री राधारानी की प्रमुख सखी ललिताजी के ग्राम ऊँचागाँव पहुँचे, जहाँ उन्होंने ब्याहुला, देहकुण्ड, ललिता अटा, श्रीरेवती-बलराम और त्रिवेणी कूप, सखी कूप तथा ब्रजाचार्य श्रीनारायणभट्टजी की समाधि के दर्शन किये | २५ नवम्बर २०१८ को यात्रा बरसाना से नंदगाँव की ओर रवाना हो गई | ४० दिवसीय यह ब्रजयात्रा पूर्णतया निःशुल्क है, जिसका योगक्षेम श्रीमानबिहारीलाल वहन करते हैं | प्रतिवर्ष क्वांर (आश्विन) माह, शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि से (अंग्रेजी के अक्टूबर माह में) श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा परमपूज्य श्रीबाबामहाराज के नेतृत्त्व में इस यात्रा का संचालन किया जाता है; जो भी यात्री इसमें सम्मिलित होना चाहें, उनका हार्दिक स्वागत है, जो ४० दिवस यात्रा कर सकें, वे पूर्णयात्रा करें; जिनके पास समयाभाव है, वे श्रद्धालु अपनी सुविधानुसार १ सप्ताह, दो-चार अथवा एक दिन के लिए भी यात्रा में सम्मिलित होकर ब्रजचौरासी कोस की दिव्य लीलास्थलियों के दर्शनानंद का लाभ ले सकते हैं, अन्तिम ४०वें दिन ३० नवम्बर २०१८ को ब्रजमण्डल की लीलास्थलियों का दर्शन करते हुए बरसाना आगमन पर इस यात्रा का समापन होगा |